पुराणसिद्धिः

कालूरामशास्त्रिरचिता।

श्रीहरिः

पुराणं न्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिता ।
विद्यास्थानानि वेदानां धर्मस्यचतुर्दश ॥ १ ॥

पुराण सिद्धिः

महोपदेशक युक्तिविशारद
पं० कालूरामशास्त्रिरचिता ।

* जिसको *

गून्थकर्ता ने स्वकीय द्रव्य व्यय से
लाला रामनारायण के प्रबंध से मरचंट प्रेस,
कानपुर में मुद्रित कराया ।

द्वितीयावृत्ति १००० प्रति | १९७३ वि० | मूल्य ।=)

इस पुस्तक के खण्डन करनेवाले को हम १००) सौ
रुपया पारितोषिक (इनाम) देंगे ।

भूमिका

पाठक ! जिस समय प्रच्छन्न नास्तिक पुराणों को गपोड़ा बतला रहे थे उस समय हमने इस पुस्तक को बनाया था आज वह दिन आया है कि इसकी द्वितीयावृत्ति छपाने का समय है। एक आवृत्ति समस्त बिक गई किन्तु इसके ऊपर लेख लिखने की या इसका खण्डन करने की शक्ति किसी भी वादी में दृष्टिगोचर न हुई, इसको देख सब के हौसले ढीले पड़ गये। यदि कोई सत्पुरुष विद्यायुक्त इसका उत्तर लिखेगा तो उस खण्डन करने वाले महात्मा को हम प्रसन्न हो कर सौ रुपये १००) इनाम देंगे।

कालूराम शास्त्री,

अमरौधा (कानपुर)

श्रीहरिः

पुराण सिद्धिः

गङ्गा तरङ्ग रमणीय जटा कलापं
गौरी निरन्तर विभूषित वाम भागम्।
नारायण प्रियमनङ्ग मदापहारं
वाराणसी पुरपतिं भजविश्वनाथम् ॥ १ ॥
नीलाम्बुज श्यामल कोमलाङ्गं
सीतासमारोपित वाम भागम् ।
पाणौ महाशायक चारु चापं
नमामिरामं रघुवंशनाथम् ॥ २ ॥

सज्जनो ! बड़ा दारुण समय आगया जिस भारतवर्ष में प्रातः काल उठ कर सन्ध्या अग्निहोत्र होता था उसी भारतवर्ष में उसी समय में बिस्कुटों का मज़ा उड़ता है ! जिन घरों में देवआहुतियों का धूम निकला करता था आज उन्हीं घरों में सिगरेट का धूम निकलता दिखलाई देता है !! जिस स्थान में प्रातःकाल जगदीश्वर की प्रतिमा का पूजन होता था आज उसी स्थान में उसी काल में

बुशों से बूटों की सफाई होती है !!! प्रभातकाल में जिन घरों में "अग्नि मीळे पुरोहितम्" शब्द सुनाई देता था उन्हीं घरों में आई माने में, जी+ओ=गो, गो माने जाओ की आवाज़ें आ रही हैं । जिन घरों में गो माता के चरण कमल पधारा करते थे आज उन्हीं घरों में टीपुओं का राज होगया है । जिस देश में अध्यात्म विद्या और ब्रह्मचर्य्य के उपदेश होते थे आज उसी देश में मूर्ति पूजन खण्डन और विधवा विवाह की आवाज़ें सुनाई देती हैं ! जिस देश में ब्राह्मणों के बच्चे महर्षि कहलाते थे उसी देश में उन्हीं ब्राह्मणों के बच्चे पानी पांडे की डिगरी पाते हैं ! जिस देश में शूद्र अपने धर्म द्विज सेवा में तत्पर रहते थे आज उसी देश में वही शूद्र भाई बिना पढ़े ही पं० गिरधारीलाल शर्म्मा कहलाते हैं ! जिस देश में अन्न वस्त्रादि से सेवा करके ब्राह्मणों के बच्चों का उद्धार करके उनको विद्या पढ़ाई जाती थी आज उसी देश में उनको त्याग कर नीच जाति वालों को विद्वान् बनाने की कोशिश कीजाती है ! सब धर्म कर्म स्वाहा होगये । भगवत आराधना कैसी, श्राद्ध की तो बात ही न रही । जगह जगह "मन चङ्गा तो कठौती में गंगा" की आवाज़ भर गई । इतना ही नहीं बल्कि देशोद्धार का जुवा कन्धे पर रखने वाले महाशयों ने बिना संस्कृत जाने ही हिन्दु धर्म के ग्रन्थों पर भी पानी फेरना आरम्भ कर दिया । वेद तो वही जो इनके मन में आता हो; सुधर्मविहित वाक्य तो वही जो इन्हें अच्छा लगे; आज वेद की कदर नहीं, आज स्मृतियां मान्य नहीं, यहां पर तो टट्टी की ओट में शिकार खेला जाता

है। जब वेदों का ही यह हाल है तब पुराणों की क्या चली है। पुराणों के लिए तो यह साफ तौर से कहते हैं कि—

(१) हम नई गढ़न्त पुराणों को क्यों मानें ?

उत्तर—अब देखना यह है कि पुराणों को नई गढ़न्त यही कहते हैं या कोई और भी कहता है। इस विषय में सबसे प्रथम महर्षि वाल्मीक की सम्मति सुनिए। आप्त वाल्मीक अयोध्या काण्ड में लिखते हैं कि—

"श्रूयतां यत्पुरा वृत्तं पुराणेषु मया श्रुतम्" अयो० का०

अर्थ—उस प्राचीन (पूर्व) वृतान्त को आप सुनें जो मैंने पुराणों में सुना है।

अब कहिए, आप्त वाल्मीक का तो यह कथन है कि उस वृत्तान्त को तुम सुनो जो मैंने पुराणों में सुना है। और इन महात्माओं का यह कथन है कि पुराण नई गढ़न्त है। अब इसमें विचार यह है कि वाल्मीक तो आप्त कि जिन्होंने योग के द्वारा भूत भविष्यत वर्तमान का प्रत्यक्ष किया, और आजकल के पुराणों का खण्डन करने वाले इतने विद्वान् कि जिनको संस्कृत के अक्षर तक नहीं आते। अब इसमें किसकी बात माननी चाहिये इसका फैसला आप साहबों के ऊपर छोड़ता हूं आपही अपने मन में फैसला करलें। द्वितीय यह बात भी गौर करने के योग्य है कि ये सज्जन पुराणों को नई गढ़न्त बतलावें और वाल्मीक त्रेतायुग में पुराणों की कथा सुनावें।

न्याय शास्त्र भी संसार में एक जगमगाता हुआ शास्त्र है। यदि न्याय फ़लासफ़ी (मन्तक) शास्त्र न बनता तो यक़ीन है कि मनुष्यों को बोलना तक न आता। उस न्याय शास्त्र के भाष्यकार "वात्सायन" जिसको संसार बड़े गौरव की दृष्टि से देखता है वह अपने भाष्य में लिखते हैं कि "पुराण विद्या वेद" यह पुराणों को वेद ही बतलाते हैं। अब इस ज़माने में जो पुराणों का खण्डन करते हैं उनसे ज़रा पूछिये तो सही कि "वात्सायन" तर्कविद्या में क्या आप कितने भी नहीं थे ?

इसके आगे स्मृतिकार पुराणों के बारे में लिखते हैं कि धर्म का निर्णय करना हो तो इतने ग्रन्थों से करना—

पुराणं न्याय मीमांसा धर्म शास्त्राङ्ग मिश्रिताः
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्यच चतुर्दश ॥ ३ ॥

अर्थ—पुराण. न्याय (मन्तक) मीमांसा दर्शन धर्म शास्त्र स्मृति ६ अङ्ग चार वेद ये चौदह विद्या धर्म का स्थान हैं।

अब यहां भी ज़रा देख लें कि स्मृतिकार धर्म के निर्णय में सबसे प्रथम पुराण का नाम लिखते हैं तथा पुराणों को प्राचीन मानते हैं और आजकल के सज्जन "नई गढ़न्त" कहते हैं फ़ैसला आपही के ऊपर है।

अब इसके आगे स्मृतियों में प्रधान स्मृति मनु का भी सिद्धान्त सुनलें। हम हिन्दुओं के लिए मनु से बढ़कर कोई फ़ैसला देने वाला नहीं हुआ क्योंकि वशिष्ट जी लिखते हैं कि—

वेदार्थोपनि बद्धत्वात्प्राधान्यंहिमनोःस्मृतम् ।
मन्वर्थ विपरीताया सास्मृतिर्नैव गद्यते ॥ ४ ॥

अर्थ—वेद के मन्त्रों का अर्थ मनु के श्लोकों में बँधा हुआ है। इसी कारण स्मृतियों में प्रधान (मुख्य) मनुस्मृति है। मनु के विपरीत (विरुद्ध) स्मृति को स्मृति ही नहीं कहते। वही मनु जी पुराणों के लिए लिखते हैं कि—

स्वाध्यायं श्रावेत्पित्रे धर्म शास्त्राणि चैवहि ।
आख्यानमितिहासांश्च पुराणान्यखिलानिच ।५।

अर्थ—श्राद्ध के अन्त में पितरों को स्वाध्याय और धर्मशास्त्र आख्यान इतिहास पुराण सुनावे।

अब आप विचार करके या तो मनु को झूंठा करदें या इन सज्जनों को। अब इसके आगे योग फ़लासफ़ी के निर्माता, वैद्यक शास्त्र के प्रवर्तक भगवान् पतञ्जलिजी अपने बनाये व्याकरण के महाभाष्य में लिखते हैं कि—

चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्या बहुधाभिन्ना एक शतमध्वर्यु शाखाः सहस्रवर्त्मासामवेद एक विंशति धावाह्वृच्यं नवधाऽथर्वणो वेदोवाक वाक्यमितिहास पुराण मेते शब्द विषयाः ।

अर्थ—चार वेद उनके अंग उनके रहस्य वह बहुत प्रकार के हुए वेद, एक सौ एक शाखा यजुर्वेद की, एक हज़ार शाखा वाला

सामवेद, २१ शाखा वाला ऋग्वेद, नव शाखा में विभक्त अथर्व, वेद, वाको वाक्य, इतिहास, पुराण ये शब्द के विषय हैं।

अब आप मिलालें कि पुराणों को कल्पना मानने वाले महाशय विद्वान् याकि भगवान् पतञ्जलि और इन दोनों में से किसका लेख प्रमाण समझा जाय।

अब इसके आगे शतपथ इस विषय में क्या कहता है। यज्ञ में दशवें दिन के लिये लिखा है कि—

"दशमेऽहनिपुराण माचक्षीत"

शत० ब्रा० १३-४-१

अर्थ—यज्ञ में दशवें दिन पुराण का पाठ करे। आगे फिर—

स यथार्द्रेन्ध नाग्ने रभ्याहितात्पृथग्धूमा विनिश्चरन्त्येवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्यनिश्वासित मेतद्य दृगवेदोयजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राणि व्याख्यानानि—

श० प्र० ४ ब्रा० ४

अर्थ—जिस प्रकार से गीले इन्धन के संयोग से अग्नि में से अनेक प्रकार के धूम प्रकट होते हैं इसी प्रकार उस परमात्मा के ऋग, यजु, साम, अथर्व, इतिहास, पुराण, विद्या, उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, व्याख्यान ये परमात्मा के श्वास भूत होकर फैले।

इस के आगे—

सवृहतीं दिश मनुष्य चत्तामितिहासश्च पुराण-श्चगाथाश्च नाराशंसि चानुव्यचलन् इतिहासस्य च सवै पुराणस्य च गाथानांच नाराश ७ सीनांचाप्रिय धाम भवाति यएवंवेद।

अथ० का० १५ प्र० ६ अनु० १ मं० १२

सभ्यो! वेद ने भी स्पष्ट कर दिया कि पुराण प्राचीन हैं। आपने वाल्मीक, वात्सायन, स्मृतिकार, मनुस्मृति, भगवान् पतञ्जलि, शतपथ जो वेद है और अथर्ववेद इन सब के लेख पुराणों के विषय में सुनें। इन सब को न देखना या सब के लेख को धूल में मिलाना और अपनी ही अपनी कहना क्या इसी का नाम तो सभ्यता नहीं है। द्वितीय इस बात को भी याद रक्खें कि इनका कुछ भी उत्तर न देकर, कुछ भी उत्तर न जान कर पबलिक को पुराण नई गढ़न्त बतलाना क्या धोखा नहीं है। हा भारतवर्ष! तेरे लाड़ले बच्चे धोखा देदे कर अधर्म प्रचार करें और अलावा इसके यह भी कहें कि हम भाष्य, शतपथ, वेद को प्रमाण मानते हैं और यह भी कहते हैं कि महाभाष्य और शतपथ में कुछ किसी ने मिलाया भी नहीं। यदि नहीं मिलाया और महा-भाष्य व शतपथ तथा वेद प्रमाण हैं तो क्या पुराणों के विषय में प्रमाण नहीं, आप लोग कैसा प्रमाण मानते हैं? मतलब मतलब का बाक़ी का नहीं!

वाहरे बहादुरो! अच्छा तरीक़ा निकाला, यह धोखे की टट्टी कब तक आड़ करेगी। यह तो किसी दिन खुलेहीगी और हमारे

भाइयों को साफ़ कहना पड़ेगा कि हम महाभाष्य और शतपथ और वेद को प्रमाण कोटी में नहीं लेते।

अब इसके आगे दूसरा प्रश्न यह करते हैं कि—

(२) पुराण वेदव्यास ने बनाये हैं ये अनादि कैसे ?

उत्तर—पुराण बीजरूप से वेद के अन्दर भरे हुये हैं। वेद-व्यास (कृष्ण द्वैपायन) ने उस विषय को अलग स्थूल रूप में बना दिया जैसा कि वेद में है—

"नमो नीलग्रीवाय"

यजु०

अर्थ—नीलग्रीव महादेव को प्रणाम है।

इस वेद मंत्र की कथा व्यासजी ने लिखी है कि महादेव नीलग्रीव कैसे हुए ?

"इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदं समूढ मस्यपां ँ सुरे"॥

यजु० १

वावन अवतार को कह रहा है। इसके ऊपर व्यासजी ने वावन अवतार की कथा विस्तार से लिखी है।

वेद में लिखा है कि—

भृगुणामंगिरसातपध्वम्

इसकी कथा व्यासजी ने साफ़ कर दी है कि कैसे तप किया और कहां पर किया।

वेद कहता है कि "पुरोरवा असि" बस पुरूरवा की कथा इसी मन्त्र के समझने के लिये लिखी गई। इसके आगे—

इन्द्रो दधीचो अस्थिभिर्वृत्राण्य प्रतिष्कुतः। जघान नवतीर्नव"

ऋ० अष्टक १ अध्याय ५

इस मन्त्र पर व्यासजी ने इन्द्र-वृत्रासुर संग्राम लिखा और यह कथा जैसी भागवत में व्यासजी ने लिखी बिल्कुल वैसी की वैसी इस मंत्र के भाष्य में शत० लिखता है वेद में लिखा है कि—

अपां फेनेन न मुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः।
विश्वाय दजया स्पृधः॥

ऋ० मं० ८ अनु० ६

बस इसी से इन्द्र से मुचि के युद्ध की कथा लिखी। अथर्व वेद का मन्त्र है कि—

यस्यावैमनुर्वैवस्वतो वत्स आसीत्पृथिवी पात्रम्। वैन्यो धोक् तां कृषिं च सस्यंचाधोक्॥ सोद क्रामत्सा सुसुरा नागच्छत्तामसुरा उपाह्व यन्त एहीतितस्या विरोचनः प्राल्हादिर्वत्स आसीत्पृथिवी पात्रम्॥

अं० का० ८ अ० ५ सू० १३

इन्हीं मन्त्रों से पृथु का इतिहास और प्रह्लाद की कथा लिखी गई। इसी प्रकार पुराणों की प्रायः समस्त कथा वेद में सूक्ष्म रूप और खास कर भागवत की कथाओं में से तो सबही कथा

वेद में मौजूद हैं हां इतनी बात अवश्य है कि वेद में सूक्ष्म रीति से हैं और व्यासजी ने इनका विस्तार दिखला दिया लेकिन यह कथा वेद में है। जब यह पुराण भाग वेद में मौजूद हैं तब इसको खण्डन करना क्या वेद का खण्डन नहीं है। आज कल के सभ्य देशोद्धारक भाई वेदों का ऐसी गुप्त रीति से खण्डन करते हैं कि खण्डन का खण्डन हो जावे और संसार यह जाने कि यह तो वेद को ही मानते हैं। यह कैसा वैदिक धर्म है कि वेद को ही मानें और वेद का ही खण्डन करें। या तो खण्डन ही करते या मण्डन ही करते, दोनों बातें न इधर न उधर—

"इधर की न उधर की। यह बलाय किधर की"

अब इन सूक्ष्म कथाओं को देख सुन कर मनुष्य इस अमर की शङ्का करते हैं कि—

(३) क्या वेद इनके पश्चात् बना जो यह कथा वेद में लिखी गई ?

उत्तर—सज्जनो ! मनष्य वेद को वेद की हैसियत से नहीं देखते इसी कारण से ये शङ्काएँ पैदा होती हैं। अच्छा आओ अब इस पर छोटा मोटा थोड़ा सा विचार करें। वेद क्या है आप कहेंगे कि "ज्ञान" वह ज्ञान किस का अब आप उसको मौलाबख्श उर्फ "धर्म देव" शर्मा का तो कह नहीं सकते आप यही कहेंगे कि ईश्वर का अच्छा तो ईश्वर का इतना ही ज्ञान है कि जो बात हो चुकी उसको अपनी पुस्तक में लिख दें ईश्वर ऐसा नहीं है उसके लिये स्मृतिकार कह रहा है कि—

"यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति"

जो परमेश्वर भूत, वर्तमान, भविष्यति तीनों कालों का ज्ञाता है। जब ईश्वर तीनों कालों को जानता है फिर क्या उसने यह सङ्कल्प कर लिया कि आगे का ज्ञान न लिखें वेद में तीनों काल के विषय जनक ज्ञान हैं। इस बात को मनु साफ तौर से कहता है कि—

"भूतं भव्यं भवच्चयत्सर्वं वेदात्प्रतिष्ठितम्"

अर्थात् भूत भविष्यत वर्तमान में जो होता है उस सबको वेद में देखो, फिर यह होने वाली बात को प्रथम ही लिख दे तो शङ्का क्यों करते हो? एक बात और भी सुनलो कि साधारण मनुष्यों की लेखनी तो इतिहास के पीछे पीछे चलती है और ईश्वर की लेखनी वेद के पीछे पीछे इतिहास जाता है इसमें तो शङ्का का कोई काम भी नहीं अब इसके आगे कोई कोई यह भी प्रश्न करने लगे हैं कि—

अच्छा यह तो माना कि बीज रूप से पुराण वेद में है

(४) परन्तु पुराण १८ क्यों?

उत्तर—बड़ी आपत्ति की बात है कि बात बात में शङ्का। यदि पुराण १५ होते तौ भी यह शङ्का बनी ही रहती कि पुराण १५ क्यों? और यदि पुराण २० होते तौ भी यह शङ्का बनी बनाई ही थी। मैं आपसे पूंछता हूं कि १८ की शङ्का पुराणों में ही क्यों करते हैं इस सनातनधर्म में तो सब ही ग्रंथ १८ की संख्या

में हैं। पुराण कितने १८, और स्मृति कितनी १८, गीता के अध्याय कितने १८, महाभारत के पर्व कितने १८, श्रीमद्भागवत के श्लोक कितने १८ हजार। यहां पर तो सब ग्रंथ अठारह अठारह की संख्या रखते हैं इसका कोई कारण अवश्य है। कारण सुनिये—पंचकर्मेन्द्रिय और पांच ज्ञानेन्द्रिय पंचप्राण पन्द्रह और मन बुद्धि अहंकार ये सब मिल कर अठारह हुए, इन अठारह से नित्य पाप होते रहते हैं। उन अठारह पापों के नाश करने को प्रत्येक ग्रन्थ में एक एक की शुद्धि के लिये एक एक के हिसाब से १८ अठारह भाग रक्खे जाते हैं।

अब इसके आगे एक यह प्रश्न करते हैं कि—

(५) कोई कोई मनुष्य यह भी कहते हैं कि यह बातें सब सही हैं किन्तु पुराणों में विरोध बहुत है। कहीं पर लिखा है कि सृष्टि के कर्ता ब्रह्मा हैं, कहीं पर महादेव को बतलाया है, कहीं पर सृष्टि की उत्पत्ति विष्णु से लिखी है, इतनाही नहीं किसी २ पुराण में सृष्टि के कर्ता गणेश और दुर्गा को भी लिखा है भला कहीं इस अन्धेर का ठिकाना है।

उत्तर—आपको यह बड़ा भारी अन्धेर मालूम देता है आप कोशिश भी करते हैं तब भी आपके दिमाग में नहीं समाता बात इसमें कुछ भी नहीं यदि कोई समझाने वाला मिल जावे तो ४ ½ मिनट में ही समझ में आजावै पूरे ५ मिनट भी नहीं लगेंगे आप के इस प्रश्न को हम एक दृष्टान्त के ऊपर समझाते हैं समझिये—

चौधरी पं० शम्भूदयालजी वाजपेयी "शास्त्री" एम्. ए. परीक्षा पास करने के पश्चात् "जज" होगए. अब यह जजी का काम करते हैं। दैवयोग से इनके रिश्तेदारों में से किसी ने अपराध किया और वह मुक़द्दमा इन्हीं के इजलास में आया इन्होंने रिश्तेदारी का कुछ भी लिहाज़ न कर अपराधी को कानून की आज्ञानुसार सात वर्ष की सज़ा करदी। अभी जज साहब इजलास से नहीं उठे कि इस सजा की ख़बर सारे शहर में फैलगई। बाजार से एक मनुष्य दौड़ कर जज साहब के घर इनके भाई के पास पहुंचा और पूछने लगा कि क्या चौधरी साहिब ने सात वर्ष की सजा करदी? भाई ने उत्तर दिया जी हां, अब एक वैश्य आया वह बोला कि क्या पंडित जी ने सात वर्ष की सजा करदी, तीसरा मनुष्य भाई के पास पहुंचा और कहने लगा कि वाजपेयीजी ने बड़ी कड़ी सजा की है एक और मनुष्य जो सुनता था वह बोला कि शास्त्री जी ने जो सात वर्ष की सजा की है बिना विचारे की है अपराधी अपील में फौरन छूट जावेगा। एक और मनुष्य बोला कि तुम कानून नहीं जानते जज साहब ने जो सात वर्ष की सजा की है वह ठीक है। अब यहां पर पूछना यह है कि इस मनुष्य को सात वर्ष की सजा हुई या ३५ वर्ष की क्योंकि चौधरी, पंडित, वाजपेयी, शास्त्री, जज, इन सबने सात २ वर्ष की सजा की है। आप कहेंगे कि नहीं २ सजा सातही वर्ष की हुई है क्यों कि शम्भूदयाल ही पंडित हैं वही वाजपेयी, वही चौधरी, वही शास्त्री, वही जज हैं। मनुष्य एक है नाम कई एक। जिस प्रकार

से यहां पर शम्भूदयाल एक और उसके नाम आधा दर्जन हैं इसी प्रकार ईश्वर एक और उसके नाम अनेक हैं। कोई उसको ब्रह्मा कहता है, कोई विष्णु कहता है, कोई रुद्र कहता है, कोई देवी कहता है कोई गणेश कहता है भिन्न २ नाम होने पर भी ईश्वर एक ही है और उसके अनेक नामों को लेकर पुराणों में सृष्टि की उत्पत्ति दिखलाई गई है। ब्रह्म कदापि दो नहीं हो सकते ईश्वर एक है और उसके रूप अनेक। किसी कल्प में तो ब्रह्मा बनकर सृष्टि रची और किसी कल्प में विष्णु रूप से, अन्य में गणेश तथा रुद्र रूप से, सृष्टि के आरम्भ में सृष्टि रचने के लिए उसको एक रूप धारण करना पड़ता है चाहे जिस रूप को धारण कर सृष्टि रचै इसमें कोई विरोध नहीं आता। कल्पना करो एक मनुष्य की कमर में खुजली उठी वह चाहे जिस हाथ की चाहे जिस अंगुली से खुजाले इसी प्रकार जिस कल्प में जिस रूप से चाहे सृष्टि रचले इसमें विरोध का क्या काम है।

कोई कोई सज्जन यह भी कहने लगे हैं कि—

(६) पंडित जी यह तो सब ठीक है परन्तु पुराणों में कथा तो ऐसी भरी पड़ी हैं जो बिलकुल ही असम्भव हैं। कहीं पर लिखा है कि शेर से गौ बोली क्या यह कोई मान लेगा कि गौ बात करे और शेर समझ कर उत्तर दे इसका क्या जवाब है?

उत्तर—इसका उत्तर यह है कि गौ बोली भैंस बोली इसको असम्भव जानकर पुराणों को छोड़ोगे तो साथही साथ "अनवार सहेली" आदि फारसी की तमाम पुस्तकें और वह पञ्चतन्त्र कि

जिसका तर्जुमा अंगरेजी, फारसी, हिन्दी में होगया है छोड़ देना होगा। क्योंकि उसमें भी लिखा है कि हिरण बोला, मेढक बोला, कौवा बोला, और इसी प्रकार अंगरेजी की भी सैकड़ों पुस्तकें छोड़ देनी होंगी। क्या इसी का नाम इन्साफ है कि यह शङ्का और किसी पुस्तक के पढ़ते वक्त चीन चली जावे और पुराणों का नाम लेते ही मन में आजावे। अस्तु, अब आप इसका उत्तर सुनें—पुराणों में तीन प्रकार की भाषा हैं इसी बात को महर्षि भरद्वाज लिखते हैं कि-

अध्यात्म भाषा प्रथमा लौकिकीतितः परा।
तृतीया परकीयेति शास्त्र भाषात्रिधास्मृता ॥६॥

अर्थात् अध्यात्म भाषा वह है कि जिस भाषा के द्वारा शरीर कथा को संसारी इतिहास बनाकर समझाया जावे।

उदाहरण—एक राजा ने नौद्वार की नगरी में निवास किया। वह राजा रानी के वशी था अर्थात् रानी जब बैठावे तब बैठता था और जब रानी उठने का हुक्म दे तब उठता था। ग़र्ज़ यह है कि रानी जैसा करवाना चाहती थी राजा वैसा ही करता था। उस राजा के पास दस घोड़े का एक रथ था कि जिसका सारथी बड़ा बली था। राजा उस रथ में बैठता और जिधर वह सारथी लेजाना चाहता था ले जाता इस प्रकार इस नगरी में निवास करते करते बहुत समय व्यतीत होगया। एक दिन अचानक एक कन्या ने आकर राजा की चुटिया पकड़ ली। राजा ने बहुतेरा अपने को

छुड़ाना चाहा परन्तु ज़ोर लगाने पर भी न छुड़ा सका। आखिर धीरे धीरे उस कन्या ने राजा को जकड़ कर बांध लिया, इसी अवसर पर ३६० चोर आ गये और राजा की नगरी को गिराने लगे। आखिर राजा को नगरी से निकाल कर चोरों ने नगरी में आग लगा दी। नगरी जल गई यह कथा श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध में है और इसका नाम "पुरजन व्याख्यान" है।

अब मैं आप से पूंछता हूं कि क्या यह कथा ठीक है? आप कहेंगे कि आप ही ठीक मानें हम तो ऐसी असम्भव कथा के मानने को तैयार नहीं, किसी बच्चे की झूंठी कहानी होगी या किसी बेवकूफ ने लिखी होगी। भला यह कौन मान लेगा कि दस घोड़े का रथ और सारथी एक। यह भी कोई नहीं मान सकता कि एक लड़की आकर राजा की चुटिया पकड़ ले और फिर छुड़ाने से न छोड़े। राजा खुद नहीं छुड़ा सकता था कि और लोग भी न छुड़ा सके, लड़की थी कि आफ़त। फिर चोर आ गये, दो न चार ३६०; वाह वाह फिर चोर भी कैसे चोरी तो करें नहीं नगरी की दीवारें खोद खोद कर गिरावें। और फिर जब नगरी खोद डाली तब भी न लूटी, फिर आग लगा दी, फिर भी माल न लिया यह कैसे चोर, कैसी कथा, हमारी समझ में तो खाक नहीं आया और आवे क्या कुछ मतलब तो तब निकले जब कि गपोड़ों को छोड़ कुछ कहा जावे।

उत्तर—आपके समझ में आ जाना ही मुशकिल है लेकिन आप जैसा समझे हैं सो तो हम जान ही गये, परन्तु हमारे समझे

अध्यात्मिक विषय पर भी नज़र डालिये। नौ द्वार की नगरी यह शरीर है इसमें जीवात्मा राजा है वह बुद्धि कि जिस बुद्धि की आज्ञा से यह राजा कार्य करता है रानी है, पांच कर्मेन्द्रिय और पांच ज्ञानेन्द्रिय यही इसके घोड़े हैं और बली मन सारथी है जो अपनी इच्छानुसार इसको घुमाता है। ऐसा घुमाते घुमाते कन्या (जरा) अवस्था जरा आ गई। उसने राजा की चुटिया पकड़ी अर्थात् केश सफेद होगये, शिर हिलने लगा, चलने फिरने से विवश हो गया यही बांधने के लक्षण हैं, फिर ३६० दिन (चोरों) ने आकर नगरी गिरादी—मृत्यु करदी। अतएव नगरी (शरीर) में आग लगा दी—(दाह क्रिया कर दी गई) यह अध्यात्मिक कथा है। इसकी यह शिक्षा है कि होशियार हो जाओ अपने कर्त्तव्य को शीघ्र करो। नगर में कन्या और चोर आना ही चाहते हैं यह बिना आग लगाये नहीं छोड़ेंगे। कहिये कथा अच्छी है या नहीं, इसका उपदेश अच्छा निकला या नहीं?

इयं स्वर्णा भारैर्न लभ्यंयदायु—
रहोतस्य दण्ड वृथायातियामः।
दिनं चात्रियामाः प्रमादाज्जनाना-
मितिवानिशं घोषयन्ती घटीयम्॥

इस उपदेश को कोई फारसी का कवि कहता है—

गाफ़िल तुझे घड़ियाल यह देता है मनादी।
गरदूं ने घड़ी उम्र की एक और घटा दी॥

द्वितीया-लौकिक भाषा। यह सीधी होती है अर्थात् इसका मतलब अपने ही विषय पर रहता है। इसकी कथा छोड़ कर केवल फल से ग़र्ज़ रहती है।

उदाहरण में मैं आपको महाभारत की एक कथा सुनाता हूं—"किसी राजा का पुत्र पांच वर्ष की अवस्था में मर गया। राजा उस पुत्र को लेकर स्मशान भूमि में गया और साथ साथ रानी और अमात्य थे। आती हुई छोटी लाश को देख कर गीदड़ बड़ा मग्न हुआ। जब राजा साहब ने पृथ्वी खुदवाई और बच्चे को गढ़े में दबा कर रोता हुआ चलने लगा तब उस गीदड़ ने विचारा कि राजा तो झट से ल्हास को दबा कर चल दिया और इस मृतक को गीध खा जावेगा, ऐसी युक्ति खेलो कि जिससे दिन अस्त हो जावे तब राजा यहां से जाय। यह सोच गीदड़ राजा के सन्मुख आकर बोला कि राजन्! आप अपने प्यारे पुत्र को जमीन में रख निर्मोही की भांति चले जाते हो। आप इसके चन्द्र तुल्य मुख को एक बार तो और देखते, इसका प्यारा मुख अभी दीख सकता है। फिर किरोड़ किरोड़ रुपये पर भी इसके दर्शन न होंगे। गीदड़ के वचन को सुन कर राजा को मोह आ गया और पुत्र की ल्हास को गढ़े से निकाल गोदी में लेकर रोने लगा।

इधर गीध ने सोचा कि राजा ने दिन छिपाने का सामान कर दिया और जो कहीं राजा को यहां पर ही दिन छिप गया तो मैं कोरा रहा और गीदड़ गुलछर्रे उड़ावेगा। यह विचार

कर वह गीध राजा से बोला कि राजन्! आप बुद्धिमान होकर मृत्तिका के तुल्य इस शव को गले लगा कर क्यों रोते हो इससे कुछ लाभ नहीं निकलेगा। बल्कि इस शरीर को देख देख इस बच्चे का आत्मा जो इसमें से निकल गया है दुःखी हो रहा होगा। इस बात को राजा ने सुन पुत्र को फिर गढ़े में रक्खा और बाद में चलने लगा। यह देख कर गीदड़ फिर सन्मुख आया और रानी से कहा कि ऐ रानी! तुम बड़ी निठुर हो एक बार इस प्रिय पुत्र को फिर से तो प्यार करो जिसको आपने नौ मास गर्भ में धारण किया था। यद्यपि आपके सन्तान और भी हो जावेगी तथापि यह कुमार तुम्हें त्रिकाल में भी नहीं मिलेगा। गीदड़ के इस कथन को सुन रानी का हृदय भर आया और बच्चे को निकाल उसका मुँह चूम कर रोने लगी।

गीध ने दिन अस्त होता हुआ देख राजा से कहा कि हे राजन्! इस संसार में आपके सदृश मूर्ख मैंने नहीं देखा आप तो वह हाल कर रहे हैं कि एक मनुष्य का पाला हुआ तोता तो पिंजड़े से उड़ गया था और वह पिंजड़े को हृदय से लगा लगा कर रोता था। बस जब इसमें तुम्हारा पुत्र ही न रहा तो तुम वृथा शिर धुनते हो।

त्वत्पुत्रोनन्वयंशेते मूढायमनु शोचत।
यः श्रोतायोनुवक्ते ह सनदृश्येत कर्हिचित्॥
नित्य आत्माव्ययः शुद्धः सर्वगः सर्ववित्परः।
धत्तेऽसौवात्मनोलिङ्गं माययाविसृजन्गुणान्॥

अर्थ--जिस पुत्र शरीर का आप सोच करते हैं वह तो यह सोता है। यदि आप कहें कि वह नहीं है जिसके लिये आप नास्ति कहते हैं उसे तो आपने कभी भी नहीं देखा। सोच मत कर, आत्मा नित्य, अव्यय, शुद्ध, और (उत्तम) सर्ववित् सर्वव्यापी वह अपनी माया से शरीर को धारण करता है और छोड़ देता है तुम्हारा भी तो यही हाल होना है जो कि तुम सोच करते हो।

इस समय में अन्तरिक्ष मार्ग से भगवान् शिव और पार्वती जी जारहे थे। पार्वती वोली कि प्राणनाथ ! यह क्या तमाशा हो रहा है। कभी तो शव को गढ़े से निकालते हैं और कभी फिर दवा देते हैं। यह सुन कर शङ्कर ने उत्तर दिया कि हे प्रिये ! यह वैराग्य और मोह का युद्ध हो रहा है कभी वैराग्य प्रबल होता है और कभी मोह। पार्वती वोली कि नाथ ! इस वालक को जीवित कीजिये। महादेव ने कृपावश हो उस पुत्र को जीवित किया, जीव आते ही वालक उठा। राजा रानी इस अलौकिक घटना को देख वालक की तरफ़ को दौड़े। वालक ने पुकारा कि खबरदार यहां आकर मुझे छूना नहीं, मैं तुम्हारा पुत्र नहीं हूं, मेरा और आप का कोई सम्बन्ध नहीं, मुझे नहीं मालूम कि इस संसार में मैं आपका पुत्र कितने वार हुआ और आप मेरे पुत्र कितने वार हुये। जितने आप मेरे लिये दुःखित हुये हैं इतने यदि आप अपने लिये दुःखित होकर अन्त के विचार में आते तो क्या आप अपने दुःख का नाश न करते। तुम अपने मरने, पैदा

होने को मिटाने के सोच में लगो। इस संसार में न कोई किसी का पुत्र है न माता न पिता यह केवल मोह की फांसी है इसको तोड़ दो। ज्ञान वैराग्य में लीन हो जाओ तो तुम सदा को सुखी हो जाओगे मैं अपनी शेष आयु को भोग कर अब जाता हूं" इतना कह कर पुत्र मर गया कथा सम्पूर्ण हुई।

अब आप बतलावें कि इसमें आप क्या समझे? आप यही कहेंगे कुछ नहीं।

इस कथा में यह दिखलाया है कि जीव का किसी के साथ सम्बन्ध नहीं है, इसमें कभी मोह होता है कभी वैराग्य। मनुष्य को अपना संसार छुड़ाने के लिये हमेशा यत्न करना चाहिये। यह फल इस कथा से लिया जाता है।

अपने किसी प्यारे की मृत्यु से दुःखित मनुष्य को चाहे आप चारों वेद सुनावें चाहे कुरान चाहे बाइबिल। क्या इनसे शान्ति मिलेगी? नहीं नहीं, हर्गिज़ नहीं। लेकिन इस ज़रा से उदाहरण रूप पुराण की कथा को सुनाइये, वह फ़ौरन कह उठेगा कि सोच करना तो व्यर्थ ही है।

अब आप एक उदाहरण विचित्र भाषा का सुनें—

एक त्रिपुरासुर राक्षस था। उसके तीन पुर थे—एक सोने का, दूसरा चांदी का और तीसरा लोहे का। इन तीनों पुरों में वास करता हुआ त्रिपुरासुर तीनों पुरों सहित संसार में विचरा करता था और संसार को दुःख देता था। दुखी संसार

महादेव की शरण गया। शङ्कर ने इसको नष्ट करने के लिए एक रथ तैयार किया। कैसा रथ था?

रथः क्षोणीयन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो।
रथाङ्गे चन्द्रार्कौरथचरणपाणिः शर इति॥

अर्थ—पृथ्वी रथ, ब्रह्मा सारथी, शेषनाग का धनुष, सूर्य चन्द्र दो पहिये, विष्णु का शर।

इसको सुन कर आप कहते होंगे कि क्या कहीं ऐसे पुर हो सकते हैं कि एकही मनुष्य एक कालावच्छेदेन तीनों पुरों में बसे और उन पुरों को जहां चाहे ले जावे। सूर्य जब पृथ्वी से बड़ा है तो पहिया कैसे बनेगा फिर दूसरा पहिया चन्द्र बिल्कुल ही ज़रा सा। यह रथ चलेगा कहां। रथ हांकनेवाला ब्रह्मा हांकेगा क्या बैल घोड़े का तो पता ही नहीं? सर्प का धनुष कौन पकड़ेगा, विष्णु का बाण कैसे बनाया जायगा? फिर बाण पर भाल का तो पता ही नहीं। क्या यह भी सम्भव है कि एक बाण में तीनों पुर गिर जावें। यह सब गप्पोड़े हैं।

उत्तर—मेरे प्यारे मित्र! इस कथा में एक भी गपोड़ा नहीं बल्कि गूढ़तत्व भरा पड़ा है। हां यह कहिए कि हम में इतनी बुद्धि नहीं जो समझ सकें। यह कथा साधारण मनुष्य की समझ में नहीं आ सकती इसी कारण से इसे विचित्र भाषा कहते हैं। अब इसकी विचित्रता सुनें। रज, सत्व, तम ये तीन गुण तो सोने चांदी, लोहे के तीन पुर हुये और स्थूल, सूक्ष्म, कारण यह तीन

शरीर है कि जिनके ज़रिये से उन तीन पुरों में वास होता है। इन तीनों शरीरों में रहने वाला अभिमानी जीव त्रिपुरासुर है इसे विजय करने के लिये यह मृत्तिका का बना हुआ मनुष्य शरीर पृथ्वी रूपी रथ है। सूर्य और चन्द्र यही दो पहिए हैं कि जिनके ज़रिए से यह रथ चलता है यानी रात के बाद दिन और दिनके बाद रात होते हुए यह रथ चल रहा है। जीवात्मा को धोखा देकर उसकी असल दशा को खाने वाला मनही सर्प रूपी धनुष है और सत्व गुण ही बाण अर्थात् विष्णु है। योगाभ्यास की उस अवस्था का नाम शिव है जब कि प्राण भृकुटी में पहुंचते हैं ज्ञानी यह जीव शिव होकर और मनुष्य शरीर रूपी रथ पर चढ़ कर सत्व गुण बाण को जिस समय मन रूपी धनुष पर चढ़ा कर छोड़ता है छोड़ते ही तीन गुण (तीनों पुर शरीर) कट जातेहैं और यह अपनी शुद्ध दशा को ग्रहण करता हुआ मोक्ष को चला जाता है। यह इस कथा का इस इतिहास से प्रयोजन है लेकिन आप इस पर ज़रा भी ध्यान न देते हुये झटपट कह देते हैं कि निरी गप्पें हैं।

यदि कोई यह कहै कि प्रश्न तो यह था कि पक्षियों की या पशुओं की बोली समझना असम्भव है इसका क्या उत्तर दिया इसका उत्तर यह है कि आपके लिये सन्देह है आपके लिये यह असम्भव है किन्तु व्यासजी के लिये तो असम्भव नहीं था व्यासजी योगी थे इस कारण वे पशु पक्षियों की बोली समझते थे इसके लिये आप योग दर्शन का विभूति पाद उठा कर देखें उसमें लिखा है कि—

शब्दार्थ प्रत्ययानामितरेतराध्यासात्संकरस्तत्प्र-विभागसंयमात्सर्व भूतरुत ज्ञानम् १७

अर्थ—शब्द अर्थ और ज्ञान इनके अध्यास को संकर कहते हैं इस संकर में संयम करने से समस्त प्राणियों की भाषा का ज्ञान होता है।

वेदव्यासजी योगी थे वे पशु पक्षी आदि प्राणियों की भाषा को समझते थे इस कारण उन्होंने पशु पक्षियों की कथा लिखी इसमें असम्भव क्या हो गया।

वाह वाह क्या ही उत्तम फैसला है इसी पर आज पुराणों से नाक सिकोड़ी जाती है और इसी अज्ञानता पर पुराणों की तरफ से त्योरी चढ़ाई जाती है। इसी के विना जाने पुराणों के ऊपर वहस करने को तैयार हैं। क्या ही ढङ्ग निकाला है कि मन से फैसला होने में तो कुछ देर भी लगती है लेकिन न मानने में ज़रा भी देर नहीं।

मैं आप से पूछता हूं कि आप व्यवहार (व्यापार) में तो ऐसा फैसला कभी नहीं करते फिर यह क्या वजह है कि पुराणों में झट फैसला कर बैठते हैं। फ़र्ज़ करिये कि आप के पास कोई सज्जन आया और उसने कहा कि मुझको यह सोने की अंगूठी बेंचनी है यदि आपकी इच्छा अंगूठी लेने की है तो फिर आप उस अंगूठी को लेकर सुनार को दिखलाते हैं। यदि सुनार यह कहदे कि इसका सोना अच्छा नहीं है बस फिर आप उस अंगूठी को हर्गिज़ नहीं लेंगे चाहे आप को अधिक मुनाफे

का भी लोभ क्यों न दिया जाय। और यदि कोई मनुष्य आपके पास हीरा और जवाहिरात लेकर आवे और आपको खरीदना मंज़ूर हो तो फिर आप उसकी पहिचान के लिये जौहरी की खोज में लगेंगे। जौहरी मिला और उसने कहा कि माल पांच हज़ार रुपये का ज़रूर है और आपको वह चार हज़ार में मिलता है तो आप उसको अवश्य खरीद लेंगे चाहे वह दो ही आने का भले ही निकले। मेरे कहने का मतलब यह है कि सोने की परीक्षा के लिये तो सुनार की खोज में लगेंगे और उसके कहने पर विश्वास मानेंगे और अपनी अक्ल को वालायताक़ रख देंगे और जवाहिरात का फैसला जौहरी से चाहेंगे। फिर यह क्या बात है कि ग्रन्थों में जब पुराण जवाहिरात के भी जवाहिरात हैं तब उनकी उत्तमता और निकृष्टता का फैसला आप ही कर लेते हैं; उनके लिये आपकी बुद्धि कहां चली जाती है और पुराणों के लिये विद्वत्ता कहां से आ जाती है।

सज्जनो! सोचने की बात है कि जिन्होंने शास्त्रों के दर्शन भी नहीं किये क्या उनका किया फैसला जायज़ हो सकता है?

"नीम हकीम खतरे जान,
नीम मुल्ला खतरे ईमान"

इतिश्रीकालूरामरचितपुराणसिद्धौप्रमाणाध्यायः प्रथमः।

पाठकवृन्द ! जब इस प्रकार पुराणों को अनादित्व सिद्ध है और उनमें किसी प्रकार की शङ्का को भी स्थान नहीं रहता तब इसको देख कर दयानन्दी सभ्य यह कहने लगते हैं कि पुराण नाम ब्राह्मण ग्रन्थों का है न कि शिवपुराण आदि १८ पुस्तकों का। इस बात को उठाने वाले स्वामी दयानन्द हैं और इस विषय की पुष्टि करने वाले पं० तुलसीरामजी। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में एक गृह्यसूत्र लिखा है जो कि आप के देखने के लिये लिखता हूं—

ब्राह्मणानीतिहास पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति।

स्वामी दयानन्दजी गृह्यसूत्र का प्रमाण देकर समझाते हैं कि ब्राह्मण ग्रन्थ पुराण हैं। मैं समाजियों से पूछता हूं कि इस सूत्र से आप का साध्यपक्ष सिद्ध हो गया ? हर्गिज़ नहीं। कारण यह है कि जिस गृह्य से आपने ब्राह्मणों की पुराण संज्ञा बतलाई है उस गृह्य को तो स्वामी दयानन्द और समाज प्रमाण ही नहीं मानती। यदि कोई यह कहे कि हम न मानें किन्तु आप तो मानते हैं, यह कथन सत्य है। हम तो गृह्य को प्रमाण मानते हैं और मानेंगे क्या हमारे मानने से आप का साध्यपक्ष सिद्ध हुआ ? नहीं हुआ। आप अपने समाजियों को किस प्रमाण से समझावेंगे कि पुराण शब्द से ब्राह्मण ग्रन्थ लिये जाते हैं। यदि कोई समाजी पं० तुलसीराम से यह प्रश्न कर बैठे कि ब्राह्मण ग्रन्थों को पुराण कहना कहां पर लिखा है। इसके उत्तर में पं० तुलसी-

राम इस सूत्र को प्रमाण दें कि "ब्राह्मणानीतिहास पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति" इस गृह्यसूत्र में लिखा है यदि वह समाजी पुरुष यह कहदे कि मैं आर्य्य समाजी हूं मैं गृह्य का प्रमाण नहीं मानूंगा। बस अब पं० तुलसीराम तो क्या यदि हिन्दुस्तान भर के दयानन्दी इकट्ठे होकर विचार करें तब भी उत्तर नहीं दे सकते। अतएव सिद्ध हो गया कि समाज अपने साध्यपक्ष (ब्राह्मण ग्रन्थ पुराण) को अपने मत में सिद्ध नहीं कर सकती। समाज को चाहिये कि प्रथम अपने साध्यपक्ष की सिद्धि अपने घर में करले पश्चात् दूसरों को समझाने चले। यदि पं० तुलसीराम यह कहें कि समाज गृह्य को प्रमाण मानती है तो फिर हम यह कहेंगे कि पं० तुलसीराम मतलबी हैं। जब मतलब अटके तो "होराचक्र और शीघ्रबोध" को भी प्रमाण मानलें और यदि मतलब बिगड़ता हो तो फिर वेद को भी नहीं मानते। समाज गृह्य को हर्गिज़ भी प्रमाण नहीं मानती। इसकी पुष्टि सुनिये (१) जब किसी शास्त्रार्थ में हम श्रौतसूत्र या गृह्यसूत्र का प्रमाण देते हैं तो समाजी लोग फौरन चिल्ला उठते हैं कि हम इन दोनों को ही प्रमाण नहीं मानते (२) स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में गृह्य को प्रमाणकोटी से बाहर निकाल फैंक दिया (३) सोलेतूर के विज्ञापन में भी स्वामीजी ने इसको प्रमाण ग्रन्थों में से निकाल दिया (४) दयानन्दी, समाज के जो शास्त्रार्थ करने के नियम छपे हैं उन में भी गृह्य को प्रमाण श्रेणी में नहीं लिया। अब आप ही बतलावें कि पं० तुलसीराम का कौन सत्व

है कि जिससे वे गृह्य को प्रमाण मान लें। गृह्य के प्रमाणकोटी से निकल जाने पर अब समाज यह निर्णय नहीं करसकती कि पुराण किस को कहते हैं। प्रथम समाज अपने मत में तहक़ीक़ात करले कि पुराण किसको कहते हैं। अभी समाजियों के मत में तो इस की तहक़ीक़ात ही नहीं हुई समाज का मत तो आप देख चुके अब पुराणों का निर्णय सुनिये। पं० ज्वालाप्रसादजी ने पूर्व लिखित महाभाष्य प्रमाण दिया कि—

सप्तद्वीपा वसुमती त्रयोलोका श्चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्या बहुधा भिन्ना एक शत मध्वर्यु शाखाः सहस्रवर्त्मा सामवेद एक विंशति धा बाह्वृच नवधाथर्वणो वेदोवाको वाक्यमितिहास पुराण वैद्यक मित्येता वाञ्छन्दस्य प्रयोग विषयाः।

पं० ज्वालाप्रसादजी ने इस पर लिखा है कि जब साङ्ग लिख चुके और साङ्ग में ब्राह्मण भी आगये तो फिर इतिहास पुराण लिखना प्रमाण दे रहा है कि इतिहास पुराण ब्राह्मण से भिन्न कोई और ही ग्रन्थ हैं। इसके ऊपर पं० तुलसीरामजी का भास्कर-प्रकाश भी देखा। पं० ज्वालाप्रसाजी के उपर्युक्त कथन का तो पं० तुलसीराम कुछ उत्तर दे ही नहीं सके किन्तु इसके खण्डन में पं० तुलसीराम ने यह लिख दिया कि :—

"यदि उक्त महाभाष्य में कहीं ब्राह्मण पद भी आता और इति-

हास पुराण शब्द भी भिन्न विषयक आते तो सिद्ध हो जाता कि ब्राह्मण इतिहास भिन्न हैं। परन्तु जब ब्राह्मण पद नहीं और इतिहास पुराण हैं तो हम कह सकते हैं कि ये ही पद ब्राह्मण ग्रथों के ऐसे भाग के नाम हैं जिसमें कोई कथा प्रसंग है वह ब्राह्मण भाग इतिहास है।

पाठकवृन्द ! पं० ज्वालाप्रसादजी ने जो यह कहा था कि साङ्ग देकर फिर इतिहास पुराण पद दिया यह सावित करता है कि इतिहास पुराण कोई भिन्न ग्रन्थ हैं। इसका उत्तर तो पं० तुलसीराम खागये, इसपर लेखनी उठाने का साहस पं० तुलसीराम में न हुआ केवल यह लिखादिया कि यदि ब्राह्मण शब्द होता तो हम मानते कि इतिहास पुराण कोई भिन्न ग्रन्थ हैं। अव हम पं० तुलसीराम और आजकल के समाजियों से पूछते हैं कि यदि ब्राह्मण पद भिन्न और इतिहास पुराण पद भिन्न दिखला दिये जावें तो फिर अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार इतिहास और पुराणों को भिन्न ग्रन्थ मान लोगे फिर तो ब्राह्मणों को पुराण न कहोगे। यदि ऐसा ही है तो प्रमाण देखिये—

एवमिमे सर्वे वेदा निर्मिताः सकल्पाः सरहस्याः सब्राह्मणाः सोपनिषत्काः सेतिहासाः सान्वाख्याताः सपुराणाः सस्वराः ससंस्काराः सनिरुक्ताः सानुशासनाः सानुमार्जनाः सवाकोवाक्यास्तेषां यज्ञमभिपद्यमानानां छिद्यते नामधेयं यज्ञमित्येवमाचक्षते। गोपथ पूर्व भाग द्वितीय प्रपाठ

यदि ब्राह्मण ग्रन्थों का ही नाम इतिहास पुराण होता तो यहां पर भिन्न भिन्न नाम क्यों लिखते और पं० तुलसीरामजी ने यह कहा था कि भिन्न नाम दिखलाओ, इस ब्राह्मण ने दिखला दिया। पं० तुलसीराम इसका कुछ भी उत्तर नहीं दे सकते और न भास्कर प्रकाश में दिया है। वहां पर टालमटोल कर भागे। पं० तुलसीराम ही क्या समाज में कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं जो इस ब्राह्मण पर दो बातें करे। न तो इस पर कुछ उत्तर ही दे सकते हैं और न ब्राह्मणों से भिन्न ग्रन्थ को पुराण ही मानेंगे। फिर लेख बढ़ाने से क्या प्रयोजन है ?

ब्राह्मणों को पुराण नहीं कहते किन्तु शिव आदि पुराणों को ही पुराण कहते हैं।

(१) ब्राह्मणों के लिये किसी ब्राह्मण या काण्ड में पुराण शब्द नहीं लिखा।

(२) इन अठारह पुराणों के प्रति स्कन्ध पर इतिश्रीमहापुराणे लिखा है। स्कन्ध की समाप्ति पर ही नहीं किन्तु अध्याय अध्याय की समाप्ति पर भी पुराण शब्द लिखा दिखलाई दे रहा है।

(३) पं० तुलसीराम ने भी भास्करप्रकाश समुल्लास ३ पृष्ठ ६२ पंक्ति ११ में लिखा है कि "पुराण में देवताओं की निन्दा" । मैं पं० तुलसीराम से पूछता हूं कि यहां पर पुराण आपने ब्राह्मणों को लिखा या अष्टादश पुराणों को ?

(४) अष्टादश पुराणानिकृत्वा सत्यवतीसुतः ।
पश्चाद्भारतमाख्यानं चक्रेतदुपवृंहितम् ॥
महाभारते ।

अर्थ—व्यासजी ने अष्टादश पुराण बनाने के अनन्तर पीछे से महाभारत बनाया ।

यहां पर पं० तुलसीरामजी बतलावें कि वह अष्टादश ब्राह्मण कौन हैं जो व्यासजी ने बनाये क्योंकि आप तो पुराण शब्द से ब्राह्मण लेते हैं। यह प्रमाण पं० तुलसीराम और समाजियों को मानना पड़ेगा क्योंकि यह प्रमाण महाभारत का है। जिसको स्वामी दयानन्द ने प्रमाण और ईश्वर कृत माना है, देखो सोलेतूर का विज्ञापन ।

(५) पुराण के लक्षण—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

अर्थ—सर्ग (तत्वों की रचना) विसर्ग (प्राणियों की रचना) वंशों का वर्णन, मन्वन्तरों की कथा, वंशों के चरित्र (कैरेक्टर) यह पांच बातें जिसमें हो उसको पुराण कहते हैं।

मित्रवर ! आप ही सोच लें कि ये पांच बातें ब्राह्मणों में हैं या व्यास कृत अठारह ग्रन्थों में, ऐसे ऐसे हज़ारों प्रमाण दिये जा सकते हैं जिनसे यह सिद्ध है कि १८ ग्रन्थों को पुराण कहते हैं मानने वाले को इतने प्रमाण बहुत हैं ।

इतिश्रीकालूरामरचितपुराणसिद्धौपुराणशब्दनिर्णयो द्वितीयः ।

पाठकवृन्द ! जब सब प्रकार से पुराणों की पुष्टि है फिर इनका खण्डन करना हँसी खेल नहीं, किन्तु ये लोग इस बात को जानते ही नहीं।

संस्कृत विद्या से अनभिज्ञ प्रायः फारसी अंग्रेज़ी आदि पढ़े ज्ञानलवदुर्विदग्ध हमारे आर्य समाजी भाई अपने अज्ञानी होने से यह समझ बैठे हैं कि १८ अठारह पुराण व्यासजी के बनाये नहीं हैं किन्तु किसी साधारण पुरुष ने बना दिये हैं। आर्यसमाजी पं० लेखराम का पक्ष है कि (१) १८ पुराणों में बौद्धावतार का वर्णन है, बुद्ध जैनों के पूज्यों वा गुरुओं से मिलता है। अनेक इतिहासवेत्ताओं ने सिद्ध किया है कि विक्रमीय संवत् से ६१४ वर्ष पहले बुद्ध हुये जिसको २५६५ वर्ष होते हैं इस समय के बाद बुद्ध के हो जाने पर पुराण बने तभी तो उनमें बुद्धावतार का वर्णन आना बन सकता है। और राजा युधिष्ठिरजी के समय पर व्यासजी हुये थे जिनको ४९९४ वर्ष हुए, तब व्यासजी से २४२९ वर्ष पीछे बौद्ध का होना सिद्ध है, इससे व्यासजी पुराणों के कर्त्ता नहीं हो सकते"।

उत्तर—पाठक महाशय ! पेशावरवासी लेखराम (जोकि एक मुसलमान के हाथ से मारे गये थे) को और कलकत्तावासी जगन्नाथ आर्य्य को इतना भी होश नहीं कि बुद्ध और बौद्ध शब्द में क्या भेद है ? इसी कारण बुद्ध लिखने की जगह पर बौद्ध लिखा छपाया है। लेखराम केवल फारसी पढ़ा था संस्कृत कुछ भी नहीं जानता था वह पुराणों का निश्चय करने चला ! आश्चर्य

मेतत् । अब जगन्नाथ आर्य्य से पूंछना चाहिये कि व्यासजी से पीछे हुये बुद्ध का वर्णन होने से यदि पुराण व्यास कृत नहीं हो सकते तो तुम जिस किसी के बनाये मानोगे उसके बनाये इससे न हो सकेंगे कि कलियुग के अन्त में होने वाले कल्की अवतार का वर्णन पुराणों में है यदि आगे होने वाले कल्की अवतार का वर्णन पहले से ही जिस प्रकार हो गया तो पीछे होनेवाले बुद्धावतार का वर्णन भी उसी प्रकार व्यासजी कर सकते हैं। व्यासजी पूर्ण सिद्ध योगीराज थे यह कई प्रकार से सिद्ध बात आर्य्य समाजियों को भी माननी पड़ेगी । योगदर्शन पाद ३ सू० १६—

परिणामत्रयसंयमादतीतानागतज्ञानम् ॥

भा०—पूर्वोक्त धर्मपरिणाम, लक्षणपरिणाम, अवस्था परिणाम इन तीन प्रकार के परिणामों में ध्यान समाधि रूप संयम करने से योगी पुरुष को भूत भविष्यत् का ज्ञान हो जाता है तब वह योगी पुरुष भूत भविष्यत् दोनों ही अदृष्टों का प्रत्यक्ष के तुल्य वर्णन कर सकता है । यदि कहो कि बुद्ध के वर्णन में भूतकाल-की क्रिया क्यों आई तो इसका जवाब यह है कि लुङ् लङ् लिट् ये लकार वेद में तीनों काल में होते हैं। (छन्दसि लुङ् लङ् लिटः। पा० ३।४।५) इस पाणिनि सूत्रानुसार वे क्रियायें त्रैकालिक हैं । यदि कहो कि यह सूत्र वेद के लिये है तो जवाब यह होगा कि (यूस्त्रियाख्यौ०) सूत्र पर महाभाष्यकार ने लिखा है कि (छन्दोवत्कवयः कुर्वन्ति) विद्वान् लोग

वेद के तुल्य शब्द प्रयोग करते हैं। इससे उन लकारों का प्रयोग होने पर भी कोई दोष नहीं इससे पुराण व्यासकृत हैं।

यदि दुर्जनतोषन्याय से वा अभ्युपगमसिद्धान्त की रीति से यही मानलें कि बुद्धावतार हो जाने पर ही पुराण बने तो भी व्यासकृत होने में कोई दोष नहीं आ सकता, क्योंकि जब तक कोई समाजी प्रमाण सहित यह न बतावे कि किस संवत् के किस मास, पक्ष, तिथि, वार में व्यासजी का देहान्त हुआ, तब तक राजा युधिष्ठिर के समय में ही व्यासजी थे आगे पीछे नहीं यह कथन मिथ्या होगा। महाभारतादि इतिहास पुराणों में ऐसे सैकड़ों प्रमाण मिलेंगे कि जिनसे राजा युधिष्ठिर के समय से सैकड़ों वर्ष पहले और सैकड़ों वर्ष पीछे भी व्यासजी का विद्यमान होना सिद्ध हो जाता है। जो वसिष्ठ विश्वामित्रादि महर्षिगण भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के समय त्रेता में विद्यमान थे वे ही महर्षिगण द्वापर में राजा युधिष्ठिर के समय में भी विद्यमान थे। सनातनधर्म सिद्ध योगी पुरुषों को अजर अमर मानता है यथा—

पृथ्व्याप्तेजोऽनिलखेसमुत्थिते
पञ्चात्मकेयोगगुणेप्रवृत्ते।
नतस्यरोगोनजरानमृत्युः
प्राप्तस्ययोगाग्निमयंशरीरम् ॥

भा०—यह श्वेताश्वतर की श्रुति है इससे सिद्ध योगी व्यासादि का अजर अमर होना सिद्ध है। तथा व्यासादि के लिये और भी लेख है। यथा—

अश्वत्थामाबलिर्व्यासो हनूमांश्चविभीषणः।
कृपःपरशुरामश्च सप्तैतेचिरजीविनः॥

भा०—अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य परशुराम ये सात चिरजीवी नाम अमर हैं, इसी कारण इनके मरने का कहीं भी लेख नहीं मिलता अश्वत्थामादि का परिगणन नहीं है कि इतने ही चिरजीवी हैं, किन्तु उदाहरण मात्र दिया गया है कि इत्यादि अन्य भी अनेक चिरजीवी अमर हैं। सिद्ध व्यासादि इस समय भी विद्यमान हैं परन्तु अधिकारी न होने से और पाप बढ़ जाने के समय में हम लोगों को नहीं मिलते। बुद्धावतार के पीछे शङ्कर स्वामी के समय में व्यासजी शङ्कराचार्यजी से मिले थे। इससे सिद्ध हुआ कि १८ पुराण व्यासजी के बनाए हैं।

(२) (पं० लेखराम) रामानुजाचार्य विक्रमीय सम्वत् १२ में हुये हैं, उन्होंने लोगों को शंख चक्रादि चिन्हों से चक्राङ्कित किया था, परन्तु लिङ्ग पुराण में उस मत का खण्डन है, तब सिद्ध हुआ कि लिङ्ग पुराण रामानुज के बाद में बना, और व्यासजी को ४९९४ वर्ष बीते। इससे लिंग पुराण व्यासजी का बनाया नहीं हो सकता।

इसका संक्षेप से समाधान यह है कि यद्यपि पूर्व लिखे विचार के अनुसार व्यास कृत लिंग पुराण में आगे होनेवाले शंख चक्रादि का खण्डन सर्वज्ञ होने से पहले भी हो सकता

है तथापि उस समाधान का यहां प्रयोजन नहीं क्योंकि प्रथम तो अभी यही सिद्ध नहीं कि यह श्लोक लिंग पुराण में हैं वा नहीं, यदि हैं तो किस ठिकाने पर हैं। अध्यायादि का पता न लिखने से लिङ्ग पुराण में वैसे श्लोक होने में शङ्का है, यदि हो भी तो वह पुस्तक ठीक संशोधन होकर छपी है वा नहीं, अर्थात् सारांश यह है कि किसी खास सम्प्रदाय के चिन्हादि का सबके लिए विधि वा निषेध करना ये दोनों ही बातें पुराणों में नहीं होनी चाहिए। क्योंकि पुराणों का विषय, सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, और वंशों के मनुष्यों का चरित्र है। यही स्मार्त्त लोगों का मन्तव्य है, सम्प्रदायी विचार एकदेशी हैं। इससे सिद्ध हुआ कि (शङ्खचक्रेतापयित्वा०) इत्यादि श्लोक यदि लिङ्ग पुराण में हैं भी तो किसी ने प्रक्षिप्त मिला दिया होगा। २१। वैष्णव मत सो सर्वदेशी व्यापक गीतादि प्रतिपादित है। वैष्णव मत सर्वमान्य अनादिकाल से है। उसको रामानुजादि ने नहीं चलाया। जिसको रामानुजादि ने चलाया वह असली वैष्णव मत नहीं है। इससे सिद्ध हुआ कि लिंग पुराण के व्यासजी कृत होने में कुछ सन्देह नहीं है।

(३) लेखराम समाजी ने तीसरा हेतु पुराणों के व्यासकृत न होने में यह दिया है कि तौजुक जहांगीर नामक पुस्तक में, आलू, तम्बाकू और गोभी के लिए लिखा है कि जहांगीर बादशाह के बाप के समय एक पादरी इन चीजों को अमरीका से लाया था जिसको २८९ वर्ष हुए परन्तु ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा

है कि (तमालंभक्षितंयेन०) तथा पद्मपुराण में लिखा है कि (धूम्रपानरतंविप्रं०) इन श्लोकों में तम्बाकू पीने की निन्दा की है इससे ये पुराण २८९ वर्ष से इधर के बने हैं और व्यासजी को हुए ४९९४ वर्ष हुए इससे ये व्यास कृत नहीं हो सकते हैं।

उत्तर—इस तीसरे हेतु में अपनी मूर्खता के कारण समाजी बहुत ही गिर गया है क्योंकि उस लेखराम को यह भी खबर नहीं थी कि तमाल व धूम्रपान शब्दों से तम्बाकू अर्थ समझ लेना ठीक है वा नहीं। तम्बाकू कहां से कब आई इस बात का भी यद्यपि खण्डन हो सकता है तथापि दुर्जन तोषन्याय से हम मान लेते हैं कि तम्बाकू २८९ वर्ष से हिन्दुस्थान में आई परन्तु जब तमाल तथा धूम्रपान का अर्थ ही तम्बाकू सिद्ध नहीं होता तो अज्ञानी लेखराम का लिखना स्वयं मिथ्या सिद्ध हो गया। सम्प्रति यवन शब्द का अर्थ मुसलमान माना जाता है। मुहम्मद साहब को पैगम्बर मानने तथा कुरान को स्वतः प्रमाण मानने वालों का नाम मुसलमान सिद्ध है। मुहम्मद साहब को हुए और कुरान पुस्तक को बने कुछ ऊपर तेरह सौ वर्ष हुए परन्तु महाभारत युद्ध को पांच हजार वर्ष हुए तब महाभारत युद्ध में यवन मौजूद थे यह महाभारत में लिखा है। इससे सिद्ध हुआ कि यवन तो पहले से थे परन्तु कुरान पुस्तक के अनुयायी एक खास प्रकार के मुसलमान १३ सौ वर्ष से हुए वा चले। इसी के अनुसार वैद्यक आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखे आलू तो पहले से ही थे परन्तु अमरीका से एक खास प्रकार के आलू

आये। तथा तम्बाकू के तुल्य खाने वा उनका धूम्रपान करने की वस्तु यहां पहले भी थी जिनका नाम तमाल आदि था उन्हीं का निषेध किया गया है। इससे पुराणों के व्यास कृत होने में कुछ भी सन्देह नहीं है। लेखराम ऐसा मूर्ख था कि जिसने (तमालंभक्षितं०) का अर्थ तम्बाकू पिया, यह किया है सो क्या भक्ष धातु का अर्थ पीना होसकता है? तथा ब्रह्माण्ड और पद्मपुराण के जो श्लोक लिखे हैं उनका कुछ भी पता नहीं लिखा इससे उस उस पुराण के श्लोक होने में भी सन्देह है। इससे सिद्ध हुआ कि पुराण व्यासकृत हैं।

(४) शङ्कराचार्य रामानुज से पूर्व हुए क्योंकि रामानुज ने शङ्कर भाष्य का खण्डन किया है, मायावाद शङ्कराचार्य ने चलाया उस मायावाद की निन्दा पद्मपुराण में की है कि—

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्धमेवच ॥

इससे सिद्ध हुआ कि बौद्ध, शङ्कर और रामानुज से पीछे पद्मपुराण बना है इससे व्यासजी का बनाया नहीं हो सकता।

उत्तर—यह चौथा हेतु भी बिलकुल पोच है। यद्यपि श्रुति स्मृति आदि के सैकड़ों प्रमाणों से मायावाद नाम सब संसार प्रपंच का असत् होना अनादिकाल से सिद्ध है किन्तु मायावाद शङ्कर स्वामी का नया मत नहीं यह सिद्ध है तथापि उसके प्रतिपादन में गौरव होने, लेख बढ़ने से तथा मायावाद की निन्दा वेद विरुद्ध प्रक्षिप्त होने से हम मायावाद का विशेष व्याख्यान

नहीं लिखेंगे। मायावाद की निन्दा किसी ने पद्मपुराण में मिलादी है क्योंकि वह पुराण का विषय ही नहीं है, चाहे यों कहो कि पुराणों के सिद्धान्त से विरुद्ध मायावाद की निन्दा की गई है। संसार प्रपंच के असत् होने के सैकड़ों प्रमाण पुराणों में भी विद्यमान हैं। जब वह श्लोक ही श्रुति स्मृति पुराण तीनों के अटल मन्तव्य से विरुद्ध होने के कारण प्रक्षिप्त हैं तो सिद्ध हुआ कि लेखराम झूंठा है और १८ अठारहों पुराण व्यासकृत सिद्ध हैं।

(५) जगन्नाथजी का मन्दिर १२३१ विक्रमीय संवत् में उड़ीसा के राजा अनङ्ग भीमदेव ने बनवाया था, मन्दिर पर भी यही संवत् लिखा है। परन्तु मन्दिर का माहात्म्य स्कन्दपुराण में लिखा है, इससे स्कन्दपुराण १२३१ संवत् से पीछे बना सिद्ध है इसीसे वह व्यासकृत कदापि नहीं हो सकता।

उत्तर—पाठक! देखिए, लेखराम समाजी की बुद्धि कैसी नष्ट थी कि आगा पीछा कुछ भी न सूझ पड़ा। यज्ञ करने का माहात्म्य वेद में पहले से है। पीछे पीछे उत्पन्न होने वाले राजादि मनुष्य उस माहात्म्य को सुन जानकर यज्ञ किया करते हैं क्योंकि माहात्म्य का मतलब ही यह होता है कि उस माहात्म्य को सुन जान कर लोग मन्दिरादि बनवावें, पूजा करें और दर्शन करें। यदि समाजी लोग माहात्म्य लिख जाने से पूर्व में यज्ञादि कामों को मानेंगे तो यज्ञ हो चुकने के बाद वेदों का बनना मानना पड़ेगा। यदि कहें कि सामान्यतया

यज्ञ का माहात्म्य यज्ञ होने से पूर्व हो सकता है परन्तु जगन्नाथ जी के खास मन्दिर का माहात्म्य मन्दिर वनने से पूर्व पुराण में नहीं हो सकता तो इसका उत्तर यह है कि जगत नाम संसार के नाथ नाम स्वामी मालिक ईश्वर भगवान् की पूजा के लिये जो मन्दिर वनाया जाय वही जगन्नाथजी का मन्दिर सामान्य होगया खास नहीं रहा। उसी सामान्य मन्दिर का माहात्म्य स्कन्दपुराण में लिखा गया, उसके वाद में मन्दिर वना। इससे स्कन्दपुराण अति प्राचीन है और उसके व्यासकृत होने में कुछ सन्देह नहीं है। इतिहास से सिद्ध है कि भारतवर्ष के चारों दिशाओं की चार हद्दों पर श्रीस्वामी शङ्कराचार्यजी ने चार धाम स्थापित किये थे जिसमें पूर्व की हद्द पर जगन्नाथपुरी है। स्वा० शंकराचार्यजी को दो हज़ार वर्ष से ऊपर हुआ, उसी समय जगन्नाथपुरी का मन्दिर वना था। उससे पूर्व जैन वौद्धों ने वेदोक्त हिन्दू धर्म के मन्दिरादि नष्ट कर दिये थे इस कारण लेखराम का यह कहना भी मिथ्या है कि "अनङ्ग भीमदेव राजा ने वि० संवत् १२३१ में जगन्नाथजी का मन्दिर वनवाया उससे पूर्व नहीं था"। हां यह हो सकता है कि पहला वना मन्दिर अधिक टूट फूट कर नष्ट होगया हो और उसका विशेष रूप से राजा अनंग भीमदेव ने जीर्णोद्धार किया हो। अनेक लोग विशेष जीर्णोद्धार को भी नया वनाना जानते वा कह सकते हैं। इससे स्कन्दपुराण का व्यासकृत होना सिद्ध है।

(६) सब विद्वानों की सम्मति है कि १८ पुराण.महाभारत

के पीछे वनाये गये हैं क्योंकि पुराणों में महाभारत का नाम आता है, परन्तु महाभारत में पुराणों का नाम नहीं है।

उत्तर—यहां समाजियों से पूछना चाहिये कि वे सब विद्वान् कौन कौन हैं उनके कुछ नाम तो गिनाइये!

सब में क्या काशीजी के विद्वान् भी सम्मिलित हैं वा नहीं? अथवा अवदुलगफूर मुसलमान तथा रणजीतसिंह भंगी आदि को ही समाजियों ने क्या सब विद्वानों में गिना है। पुराणों में महाभारत का नाम कहां कहां आया है सो पते सहित दिखाये विना लिख देना धोखा देने के लिये होना सम्भव है। यदि यह नियम माना जाय कि पहले वने पुस्तक में पीछे वननेवाले पुस्तक का नाम नहीं हो सकता, और हो तो उसे पीछे वना मानो, तब ऐसी दशा में स्वामी दयानन्द का वह लेख मिथ्या होगा कि मन्त्र भाग रूप वेद पहले वना, ब्राह्मण ग्रन्थों को पीछे ऋषियों ने वनाया, उन पीछे वने ब्राह्मणों का इतिहास पुराणादि नाम [तमितिहासश्च पुराणञ्च] इस वेद मन्त्र में आया है। स्वामी दयानन्द ने मन्त्र के कहे इतिहास पुराण शब्दों का अर्थ ब्राह्मण ग्रंथ किया है तब ब्राह्मण ग्रन्थों से पीछे वेद मंत्रों का वनना समाजियों को मानना चाहिये। इससे सिद्ध हुआ कि १८ अठारह पुराण प्राचीन हैं। इस छठे हेतु में लेखराम ने अपनी बड़ी मूर्खता दिखायी है क्योंकि कल्पना करो कि पुराण महाभारत के वाद में वने ही मान लिये जांय तो सिद्ध हो जायगा कि महाभारत वनाने के पश्चात् व्यासजी ने अठारह

पुराण वना दिये। क्या महाभारत के वाद व्यासजी पुराण नहीं वना सकते थे? यदि वना सकते थे तो इस छठे हेतु से व्यास-कृत होने का कुछ भी निषेध न हुआ। प्रतिज्ञा थी कि पुराण व्यासकृत नहीं, छठे नम्वर का हेतु न्याय दर्शन अ० ५ आ० २ सू० ४ के अनुसार प्रतिज्ञा विरोध नामक निग्रह स्थान अर्थात् पराजय सिद्ध हो गया।

प्रश्न—छठे नम्वर पर यह भी लिखा है कि महाभारत शांति पर्व अ० ३३२। ३३३ से विदित है कि व्यास-पुत्र शुकदेवजी राजा परीक्षित के गर्भ में आने से भी वहुत पहले मर चुके थे फिर महाभारत के ९६ वर्ष पीछे शुकदेवजी ने राजा परीक्षित को भागवत कैसे सुनाई। जव भागवत न शुकदेव जी ने सुनाई और न राजा परीक्षित ने सुनी और व्यासजी इन दोनों से वहुत पहले हो चुके थे इससे भागवत व्यासकृत नहीं है।

उत्तर—वड़े आश्चर्य का विषय है कि राजा युधिष्ठिरजी को तथा शुकदेवजी को एक मूर्ख लेखराम पंजावी ने लिखा कि वे मर गये भला सोचिये तो सही कि क्या इसने उनकी यह साधारण मानहानि की है। यदि राजा युधिष्ठिर के कुल का वा व्यासजी का कोई पुरुष विद्यमान होता तो लेखराम समाजी पर मानिहानि का दावा अवश्य कर देता। वेद में जिस मुक्त को अमर हो जाना लिखा है कि वह मोक्षाधिकारी जन्ममरण से छूट कर अमर हो जाता है। (तमेवविदित्वातिमृत्युमेति०) (अमृतास्ते भवन्ति) इत्यादि वेद प्रमाणों से भी मोक्ष में मृत्यु

का निषेध किया है। व्यासजी ने स्वर्गारोहणिक पर्व में लिखा है कि राजा युधिष्ठिरजी की मृत्यु नहीं हुई किन्तु धर्मावतार राजा युधिष्ठिरजी इसी भौतिक शरीर सहित स्वर्ग को गये इससे उनको मर गये लिखना व्यासजी के लेख इतिहास के ही विरुद्ध है। तथा शुकदेवजी मुक्त हो गये वा अमर भाव को प्राप्त हो गये इससे उनको मर गये लिखना भी सर्वथा असत्य है।

सत्यार्थ प्र० समुल्लास ९ पृ० २३८ में (य आत्माऽपहत-माप्मा०) इत्यादि छन्दोग्योपनिषद् के प्रमाण पर स्वामी दया-नन्द ने लिखा है कि वह मुक्त पुरुष सत्य काम सत्य सङ्कल्प हो जाता है, उस मुक्त जीव के शुद्ध दिव्यनेत्र शुद्ध मन आदि इन्द्रियां भी सङ्कल्प सिद्ध होती हैं। छान्दोग्य प्रपा० ८ खण्ड २ काण्डिका १०।

यं कामं कामयते सोऽस्य संकल्पादेव समुत्तिष्ठति। कठ्योपनि० एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत् ॥

इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है कि मुक्त पुरुष जिस जिस लोक तथा देश कालादि में जैसे जैसे नाम रूपादि द्वारा जो जो कुछ काम करना चाहता है सो सब कर सकता है। यह भी सर्वत्र प्रसिद्ध है कि जो देवयोनिस्थ प्राणी मनुष्यों को अत्र नहीं दीखते उन देवों के साथ भी पूर्वकाल में उत्तम प्रबल धर्मात्माओं का मेल मिलाप वार्त्तालापादि हुआ करता था। तब मान लेना

चाहिए कि देवों के तुल्य मुक्त हुए शुकदेवजी ने भी सिद्ध होकर प्रवल धर्मात्मा राजा परीक्षित् को भागवत सुनाई सो सम्भव ही है।

यह पूर्वोक्त समाधान शास्त्र मर्यादा के सर्वथा अनुकूल है तथापि हम इसकी पुष्टि के लिये प्रमाण भी दिखाते हैं। देखिये महाभारत में शुकदेवजी की अवस्था मोक्ष होने से पहले २५ वर्षकी लिखी है और श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध अ० १६ श्लोक २६—

तंद्व्यष्टवर्षंसुकुमारपाद करोरुबाहुंसकपोल गात्रम् ॥

जब राजा परीक्षित गंगा तट पर आसन लगा कर मृत्यु आने से पूर्व बैठे तब बहुत से देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि लोग राजा के पास मिलने को आये जिनमें वसिष्ठ, विश्वामित्रादि सभी सिद्ध तथा मुक्त लोग एकत्र हुये। उसके पश्चात् दश वर्ष की वा सोलह वर्ष की अवस्था वाले जिनके हाथ पांव आदि शरीराङ्ग अति कोमल सुकुमार थे ऐसे फैले केशोंवाले जटाधारी दिगम्बर नाम नग्न परमहंस रूपधारी शुकदेवजी भी आये उनको देखकर सब ऋषि मुनि अपने अपने आसनों से उठे तथा राजा ने शुकदेवजी का पूजन करके उत्तमासन पर बैठाया और कहा कि मालूम होता है कि कृष्ण भगवान् ही मुझ पर प्रसन्न होगये हैं क्योंकि—

अन्यथातेऽव्यक्तगतेर्दर्शनंनः कथंनृणाम् ॥ ३६ ॥

यदि ऐसा न होता तो जिनकी गति नाम चलना फिरना

व्यक्त नाम प्रत्यक्ष नहीं उन आप जैसे मुक्त पुरुष का दर्शन हम मनुष्यों को क्यों कर हो सकता था। यहां राजा ने अपने को मनुष्य कहते हुए शुकदेवजी को मनुष्यत्व से पृथक दिखाया तथा अव्यक्त गति कहने से दिखाया है कि स्थूल पञ्चमहाभूतजन्य देहधारियों की सी गति उनकी नहीं है। इत्यादि श्रीमद्भागवत के लेख से ही साफ साफ सिद्ध है कि यहां राजा परीक्षित को भागवत सुनाने वाले यथेच्छाचारी मुक्त शुकदेव हैं किन्तु मोक्ष से पहले मानुष देहधारी शुकदेव ने भागवत नहीं सुनाई थी। क्या कोई समाजी यह सिद्ध करेगा कि जड़ शरीर के नष्ट होने से शुकदेव नामक चेतनात्मा का भी अभाव हो गया? यदि ऐसा मानो तो मोक्षानन्द का अनुभव कौन करेगा? तात्पर्य यह निकला कि मुक्ति को प्राप्त हुए शुकदेवजी ने ही राजा परीक्षित को भागवत सुनाई थी इस कारण कोई भी दोष नहीं है।

इसके सिवाय एक बात यह भी हो सकती है कि महाभारत शान्तिपर्व आपद्धर्म अ० १५० से १५२ तक इन्द्रोतजनमेजय संवाद नामक एक उपाख्यान है। राजा युधिष्ठिर ने प्रश्न किया है कि अज्ञान से किये पाप का प्रायश्चित् क्या है? इस पर शरशय्या पर लेटे भीष्मपितामहजी कहते हैं कि—

आसीद्राजामहावीर्यः पारिक्षिज्जनमेजयः।
अबुद्धिपूर्वमागच्छद् ब्रह्महत्यांमहीपतिः॥ ३॥

परीक्षित का पुत्र राजा जन्मेजय पूर्वकाल में हुआ था, उसने

अज्ञान से ब्रह्महत्या की थी। अब सोचने की बात है कि जब शरशय्या पर लेटे हुए भीष्मजी राजा युधिष्ठिर को धर्मोपदेश कर रहे थे उस समय परीक्षित् गर्भ में थे तब परीक्षित् के पुत्र जन्मेजय कहां से आते? इससे सिद्ध है कि महाभारत के समय से बहुत पूर्वकाल में अन्य भी एक राजा परीक्षित् हुये थे, उनके पुत्र जैसे जन्मेजय हुए वैसे सम्भव है कि उन्हीं राजा परीक्षित् में श्रीमद्भागवत की अन्य बातें भी घट जावें तब उन्हीं परीक्षित् राजा को शुकदेवजी ने भागवत् सुनाई हो यह भी हो सकता है। ऐसी दशा में शुकदेव के मोक्ष होने का सन्देह भी नहीं होता क्योंकि उस समय वे ही मानुष देहधारी शुकदेव विद्यमान थे। इस प्रकार दोनों दशा में शुकदेवजी का राजा परीक्षित् को भागवत सुनाना बन सकता है।

(७) लिखा है कि नारदजी व्याकुल होकर बद्रिकाश्रम में विष्णु के पास गये, वहां वह तप कर रहे थे, उन्होंने इनसे समाचार पूछा, नारदजी ने सब वृत्तान्त कह सुनाया कि म्लेच्छों ने महादेवजी का मंदिर तोड़ डाला और महादेवजी ज्ञानवापी अर्थात् कुएं में डूब गये। अब इस बात को सब विद्वान् जानते हैं कि यह वृत्तान्त जो नारद ने विष्णु को सुनाया और औरंगजेब के समय में हुआ था जिसने विक्रम सम्वत् १७१३ से १७६४ तक राज्य किया था तब भागवत को बने केवल १८७ वर्ष हुये हैं।

उत्तर—यह ऊपर लिखी कथा श्रीमद्भागवत के किस स्कन्ध के किस अध्यायमें है सो आर्यसमाजी लेखरामादि को ठीक

पते सहित प्रमाण देकर लिखना था । हमने श्रीमद्भागवत में बहुत खोज किया पर इस वृत्तान्त का पता नहीं लगा । जैसे स्वा० दयानन्द ने अनेक बातें भागवत के नाम से अपने सत्यार्थप्रकाश में मिथ्या लिख दी हैं वैसे ही मिथ्या भाषण के ठेकेदार लेखराम समाजी ने भी भागवत के नाम से यह वृत्तान्त निश्चय मिथ्या लिख दिया है क्योंकि इन लोगों को मिथ्या कहने तथा लिखने में कुछ भी लज्जा वा संकोच नहीं है । ये लोग ऐसे निर्लज्ज हैं कि लज्जा भी इनसे लज्जित होजाती है । यदि कोई आर्य समाजी नं० ७ के वृत्तान्त को श्रीमद्भागवत के किसी स्कन्ध तथा अध्याय के पते सहित बतावेगा तो फिर भी जवाब दिया जायगा और उसका अहसान मानेंगे ❧

(८) अठारह पुराणों में सब ऋषि मुनियों और देवताओं की निन्दा लिखी है, और उन पर मिथ्या कलङ्क लगाए हैं, यथा ब्रह्माजी को बेटी से व्यभिचार का कलङ्क, कृष्णजी को कुब्जा और राधा से, महादेव को ऋषियों की स्त्री से, इत्यादि, पर बौद्ध को कोई दोष नहीं लगाया इससे पुराणों के कर्त्ता बौद्ध-मतवाले हैं किन्तु व्यासजी नहीं हैं ।

उत्तर—किसी भी पुराण में किसी ऋषि मुनि वा देवता को लेशमात्र भी दोष नहीं लगाया गया, और न किसी को व्यभिचार का कलङ्क लगाया किन्तु ऋषि मुनि तथा देवताओं की शुद्ध अटल कीर्त्ति पुराणों में स्थापित की गई है जो कभी नष्ट होनेवाली नहीं है । ये समाजी लोग अपने बाप दादों के भी निन्दक

हैं। निन्दा करना ही इनका काम है। शुद्ध विचार को ऐसा बिगाड़ के दिखाते हैं कि जिससे लोगों को सनातनधर्म की अश्रद्धा होके नास्तिक बन जावें तो आर्यसमाज में चन्दा आने लगे। ब्रह्मा सरस्वती के विषय में हम आगे की पुस्तक में समाधान करेंगे, भगवान कृष्णजी की भक्ति कुब्जा राधाजी आदि करती थीं। इस अभिप्राय को आर्य समाजियों ने व्यभिचार बताया, शिवलिंगपूजा माहात्म्य आगे की पुस्तक में लिखा जायगा, वहां लेशमात्र भी व्यभिचार दोष शिवजी में नहीं आता। ऐसा दिखा दिया है इसी प्रकार सब बातों का समाधान हो चुका है।

(९) व्यास के बनाये हुए वेदान्त सूत्र, मीमांसा की व्याख्या, योगभाष्य जगद्विख्यात है, उनका धर्म भी सब विद्वानों पर प्रगट है, परन्तु यह १८ पुराण उनसे अत्यन्त विरुद्ध हैं, इनका कोई सिद्धान्त पूर्वोक्त शास्त्रों से नहीं मिलता जिससे अच्छी प्रकार ज्ञात होता है कि ये ग्रन्थ उनके बनाये हुये नहीं हैं।

उत्तर—अठारह पुराण वेदान्त सूत्रादि से बिलकुल विरुद्ध नहीं किन्तु सर्वथा वेदान्त सूत्रादि के अनुकूल १८ पुराण हैं। यदि लेखराम समाजी किसी विरोध को दिखाता तो उसका खण्डन किया जाता, वेदान्त सूत्रादि में विग्रहवती देवता, अवतार सिद्धि, मूर्तिपूजादि सब बातें पुराणों के तुल्य ही मानी गई हैं। (भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्) इस योग सूत्र पर व्यास भाष्य में चतुर्दश भुवनों का विचार सर्वथा पुराणों के अनुकूल लिखा है। तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्। योगसूत्र के व्यास भाष्य में ईश्वर

का अवतार लिखा है। इत्यादि सैकड़ों बातें पुराणानुकूल योग भाष्यादि में लिखी हैं। लेखराम समाजी ने धोखा देने के लिये नंबर ९ का लेख मिथ्या लिखा है।

(१०) देवी भागवत में लिखा है कि आर्यावर्त्त के एक राजा का लड़का म्लेच्छ वेश्या—रण्डी पर आसक्त होकर धर्म से पतित होगया। यह प्रत्यक्ष है कि जब मुसलमान नहीं आये थे तब मुसलमान रण्डियां भी न थीं, तब उन पर कोई आसक्त भी नहीं होता था, इससे निश्चय है कि देवी भागवत मुसलमानों के समय में बनी है किन्तु व्यासकृत नहीं है।

उत्तर—यदि लेखराम समाजी यहां देवी भागवत के उस प्रमाण का पता देकर ठीक ठीक लिख देता कि वहां ऐसा लिखा है तो ठीक उचित जवाब दिया जाता परन्तु उसे धोखा देना था। कोई भी समाजी सिद्ध नहीं कर सकता कि म्लेच्छ शब्द का अर्थ मुसलमान है किन्तु स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में साफ साफ अक्षर न बोल सकनेवाले को म्लेच्छ लिखा है, सो ऐसे आर्य समाजी बहुत हैं, लेखराम भी शुद्ध बोल नहीं सकता था, इससे वे सभी समाजी म्लेच्छ हुए। म्लेच्छ शब्द बहुत पुराना है, वेश्या भी पूर्वकाल से होती रही हैं। यवन लोग महाभारत के समय भी विद्यमान थे। इस कारण जब यह नियम नहीं कि म्लेच्छ शब्द का अर्थ मुसलमान ही हो तो किसी नीच वेश्या पर आसक्त होने से पतित हो सकता है, देवीभागवत निर्दोष पुरातन व्यासकृत सिद्ध है।

"पुराण किसने बनाये" ऐसी प्रतिज्ञा करके लेखराम वा कलकतिया जगन्नाथ गुप्त अपनी प्रतिज्ञा से विरुद्ध ब्राह्मण के कर्म लिखने लगा, क्योंकि ये लोग स्वभाव से ही ब्रह्मद्रोही होते हैं इससे जब तक ब्राह्मण की निन्दा न कर पावें तब तक इनका पेट पिराया करता है। विषयान्तर में जाने रूप प्रतिज्ञा विरोध निग्रहस्थान नाम पराजय होगया। ब्राह्मण की निन्दा दिखाने के विचार से अत्रिस्मृति का निम्न श्लोक लिखा सो भी अशुद्ध—

वेदैर्विहीनाश्चपठन्तिशास्त्रं,
शास्त्रेण हीनाश्चपुराणपाठाः।
पुराणहीनाःकृषिणो भवन्ति,
भ्रष्टास्ततोभागवताभवन्ति ॥

इस श्लोक के (वेदैर्विहीनाश्च) में चकार खा गया तथा (कृपिणो०) को कृपणो लिखा ये दो अशुद्धियां बोध न होने से हुई हैं। वेद के पढ़ने पढ़ाने को सभी सनातन धर्मी सब से उत्तम काम मानते हैं इसी कारण वेदपाठी ब्राह्मणों का विशेष आदर भी करते हैं, यह एक साधारण बात है, कि जो जो काम कठिन हैं उन उन को जो जो लोग नहीं कर पाते वा नहीं कर सकते वे लोग उन कठिनों से कुछ कम कठिन कामों को करते हैं तथा कोई उनसे भी सुगम वा रोचक कामों को करते वा करना चाहते हैं। पठन पाठन के ग्रन्थों में इति-

हास, उपाख्यान, नावेल, उपन्यास या किस्सा कहानी पढ़ने देखने में अनेक लोगों का चित्त लगता है। तदनुसार वेद का पढ़ना पढ़ाना सबसे कठिन है, शास्त्र उससे कुछ सुगम हैं, पुराण उन शास्त्रों से भी सुगम हैं। उनमें उपाख्यानादि के कारण भी चित्त लगता है। यह एक संसार की स्वाभाविक प्रवृत्ति दिखाई है किन्तु इसमें किसी की निन्दा स्तुति नहीं है। यह भी ठीक है कि जो कुछ भी नहीं पढ़ते वे लोग प्रायः खेती करते हैं। परन्तु (भ्रष्टास्ततोभागवता भवन्ति) वाक्य का जो अर्थ आर्य समाजी ने लिखा है कि "सबसे पतित भागवत पुराण वांचते हैं" सो यह लिखना प्रत्यक्ष प्रमाण से ही विरुद्ध है क्योंकि भागवत पुराण वांचने वाले सैकड़ों कहीं कहीं सहस्रों रुपये पुजाते और बड़े आनन्द में रहते हैं वे लोग खेती आदि को नीच काम समझ के कदापि करना मंजूर नहीं करते। यदि आर्य समाजी न मानें तो एक किसी भागवती पण्डित और एक किसान को एकत्र करके निश्चय कर लेवें। बड़े आश्चर्य की बात है कि इन समाजियों को प्रत्यक्ष प्रमाण से विरुद्ध लिखते समय कुछ भी संकोच वा लज्जा नहीं होती! वास्तव में प्रत्यक्ष प्रमाणानुकूल (भ्रष्टास्ततो भागवता भवन्ति) वाक्य का सत्य सत्य अर्थ यह है कि धर्म शास्त्र बनाने वाले महर्षियों ने अपनी सर्वज्ञता से जान लिया था कि जब भारतवर्ष में किसी वेदमतानुयायी किसी धार्मिक राजा का राज्य न रहेगा तब पाखण्ड बहुत बढ़ेगा तदनुसार पाखण्ड बढ़ रहा है, अनेक पाखण्डी पूजे भी जाते हैं। इसी से अनेक निकम्मे

लोग जो मेहनत करके भोजनादि नहीं करना चाहते किन्तु पाख-
ण्ड बनाके पुजाना चाहते हैं। ऐसे लोग शिर में अन्य जानवरों के
वाल जोड़ के बड़ी चींड़ लपेट कर, शरीर में मट्टी लगा, हाथ में
चिमटा लेकर, कहीं तपस्वियों का भेष बना के, दिखावटी तप
करते हुए भगवान् के आश्रय बनने के कारण उनको भागवत कहा
गया (भगवत उपासकाएव भागवताः) वास्तव में ऐसे वैरागी
आदि कई नामों वाले निकम्मे मूर्ख ढोंगी पाखंडी खेती आदि से
भी भ्रष्ट रामनाम आदि कह कर अपने को भगवद्भक्त जतानेवालों
को अत्रिस्मृति में दिखाया है। पर यह भी ध्यान रहे कि उन
वैरागी आदि में यद्यपि विशेष कर मूर्ख ढोंगी पाखण्डी ही होते
हैं तथापि यदि बिन पढ़ा वा कुछ पढ़ा कोई सच्चा भगवद्भक्त
भी हो सकता है कि जो काम क्रोध लोभ से बच के केवल
भगवद्भक्ति में लग सके उसकी निन्दा यहां नहीं है।

पाठक महाशय ! देखा आपने, समाजी उक्त श्लोकको ब्राह्मण
की निन्दा में लगाता था परन्तु उसमें ब्रह्मनिन्दा कुछ भी नहीं
निकली, किन्तु अत्रि के श्लोक का सत्य अभिप्राय भी दिखा
दिया गया।

तुलसीकृत रामायण को हम भी तीन सौ वर्ष के भीतर
की बनी मानते हैं इससे उसकी प्रतिष्ठा में कुछ बाधा नहीं है।
तथा बाबू हरिश्चन्द्रजी भारतेन्दु के लेखानुसार हम भी मानते
हैं कि आर्य समाजियों के तुल्य संसार में विरोधाग्नि को भड़-
काने वाले शैव शाक्त वैष्णवादि संप्रदायियों में भी कोई कोई

ऐसे लोग होते आये हैं कि जिन्होंने पुराणादि में अनेक वचन स्वार्थसाधनार्थ मिलाये वा किसी किसी ने ऋषियों के नाम से नये पुस्तक तक बना दिये हैं। जैसे वृद्ध हारीतस्मृति इत्यादि। शैव शाक्तादि मतों में जो जो फिर्के वा अंश वेद विरुद्ध चल गये थे जैसे पाशुपत मत तथा वाममार्ग और साम्प्रतिक वृन्दावनवासी मधुसूदन वैष्णव इत्यादि का खण्डन शङ्कर स्वामी आदि महात्मा लोग पहले से ही करते आये हैं । अब भी वैसे वेद विरुद्धांशों का खण्डन ब्रा० स० आदि पत्रों में सदा होता है। इस कारण श्रीमान् बाबू हरिश्चन्द्र भारतेन्दु का लिखना सर्वथा सनातनधर्म के अनुकूल है उससे पुराणों का कुछ भी खण्डन वा निन्दा नहीं होती । और यदि बाबू हरिश्चन्द्र के किसी कथन से सनातनधर्म का सिद्धान्त न भी मिले तो वे बाबू हरिश्चन्द्र कोई संस्कृत के विद्वान् नहीं थे और वे धर्म के आचार्यों में भी परिगणित नहीं थे, उनकी प्रतिष्ठा देशहितैषी होने के कारण विशेष कर हुई है। धर्म विषय में उनका प्रमाण कोई भी नहीं मानता है। तब बाबू हरिश्चन्द्र भारतेन्दु का सहारा लेना आर्य समाजियों के लिये लज्जित कराने वाला वा उपहास करानेवाला काम है।

इतिश्रीकालूरामरचितपुराणसिद्धौकर्तृनिर्णयस्तृतीयः

पाठक वृन्द ! पुराने ज़माने में जितने ग्रन्थ लिखे गये वह सब धर्म की रक्षा और आत्मोन्नति द्वारा जीव के सुधार पर लिखे गये। यद्यपि संस्कृत वाणी में श्रुति, स्मृति आदि अनेक ग्रन्थ इस विषय को मुक्तकंठ होकर कह रहे हैं तथापि उपरि विषय में पुराणों की गणना लीगई है। धर्म के निर्णय के लिये मनुजी लिखते हैं कि—

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्यच प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥

अर्थ—श्रुति, स्मृति, सदाचार (श्रेष्ठ पुरुषों का चरित्र) अपने आत्मा को प्रिय, इन प्रकारों से धर्म का निर्णय होता है।

यदि इनमें से किसी का भी अभाव हो जावे तो ठीक सर्वोत्तम धर्म का निर्णय होना कठिन हो जाता है। धर्म के निर्णय में सदाचार भी लिया है वह सदाचार न वेद में मिलता है, न ब्राह्मण ग्रन्थों में, न उपनिषद् में और न स्मृति में। सदाचार मिलने की पुस्तकें तो श्रीमद्भागवत आदि पुराण या महाभारत आदि इतिहास हैं। यदि आप पुराणों को अमान्य, अप्रमाणिक करोगे तो फिर आप सदाचार कहां से लाओगे ? सदाचार के विना धर्म का निर्णय भी नहीं कर सकते। तुम जो नित्य प्रति धर्म धर्म चिल्लाते हो इसके असली तत्व से वञ्चित रह जाओगे। यदि कहो कि पुराणों के विना ही धर्म का निर्णय कर लेंगे तो यह आपकी भूल या हठ है। जब मनु ने ही धर्म के निर्णय में सदाचार की सहा-

यता चाही तव तो सदाचार के विना धर्म का निर्णय कोई भी आस्तिक मानने को तैयार नहीं । सदाचार को उड़ा कर यदि आप धर्म का निर्णय करना चाहते हैं तव तो हमको कहना पड़ेगा कि आप केवल पुराणों का ही खण्डन नहीं करते किन्तु मनुस्मृति का भी खण्डन कर रहे हैं ।

दयानन्दी समाज जो रात दिन पुराणों का खण्डन करती है, पुराणों का खण्डन करना ही जिसका परम धर्म है वह भी लाचार होकर पुराणों की शरण आती है । बाबू हंसराजजी तथा पण्डित अखिलानन्द आदि आदि उपदेशक अपने अपने व्याख्यानों में पुराणों की कथा अवश्य लेते हैं । कोई किसी व्याख्यान में राजा युधिष्ठिर की कथा सुनाता है और कोई किसी व्याख्यान में भीष्म, भीम, करण की । कोई प्रभु रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न की और कोई सहस्रावाहु, अर्जुन, रावण, अञ्जनीकुमार की । "जादू तो वही जो शिर पै चढ़ के वोले" । पुराणखण्डन करने वाली पार्टी के भी उपदेशक पुराणों से ही धर्मोपदेश करते हैं । इसी कारण से तो मैं कहता हूं कि पुराणों को न मानने से धर्म का निर्णय ही न हो सकेगा यह प्रथम दोष है ।

पुराणों के न मानने से ऐसे ऐसे कितने ही दोष आ जावेंगे । पुराण जिन पांच विषयों को कहते हैं उनका वर्णन दूसरे ग्रन्थों में है ही नहीं । जव पुराणों को छोड़ देंगे तो फिर उनका ज्ञान किस ग्रन्थ से होगा ज़रा इस पर भी विचार होना चाहिये । वे विषय कौन हैं ।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणिच।
वंशानुचरितंचैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

सर्ग (तत्वोत्पत्ति) इस विषय के प्रश्न करने पर सभी धर्मपुस्तकों की पोल खुल जाती है। जिस समय "पृथ्वी की उत्पत्ति किस तत्व से है" यह प्रश्न ईसाइयों से करोगे तो इञ्जील के हज़ार बार पन्ने उलटने पर भी उत्तर न मिलेगा और यही हाल कुरान शरीफ का भी है। अब चलिए वेदपाठियों के पास। हमारे वेदपाठी भाई केवल मन्त्र भाग को प्रमाण मानते हैं और अपने को साभिमान वैदिक वैदिक कहते हुए वेद की प्रशंसा करते फूले नहीं समाते। विना पूँछे भी कह डालते हैं कि वेद सच्चा ज्ञान है। ईश्वरीय ज्ञान है। भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों काल का ज्ञान है। इनसे पूँछिये कि कृपा कर अपने ज्ञान के भंडार से बतलाइये कि "पृथ्वीतत्व की उत्पत्ति किस तत्व से है"। इतना सुनते ही नमस्ते कर लम्बे क़दम बढ़ावेंगे कुछ भी उत्तर नहीं देते, दें तो तब जब कुछ वेद में इस विषय का ज़िक्र हो। इन भाइयों से यह तो पूंछो कि क्यों महाशय जी, यह आप का वेद कैसा ज्ञान का भंडार है कि जिसमें पृथ्वीतत्व की उत्पत्ति भी नहीं! जिस मन्त्र भाग * वेद में पृथ्वीतत्व की भी उत्पत्ति नहीं, स्वामी दयानन्दने उसी को ज्ञान का भंडार बनाया और उसी में से रेल दौड़ा कर तार खड़खड़ा दिये।

---

* सनातनधर्म समस्त वेद को मानता है।

शोक की बात है कि रेल, तार बनाना तो इनके वेद से सिद्ध है किन्तु पृथ्वीतत्व की उत्पत्ति नहीं, गरज़ यह है कि ये भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते। इसी प्रकार और और धर्मवालों के भी पास दौड़ लगाइये किन्तु किसी से उत्तर नहीं मिलता। आजकल के साइन्स वाले ऐसे ऐसे विषयों पर तीव्र कटाक्ष करते हैं कि यह कैसे ईश्वरकृत ग्रन्थ हैं कि जिनमें मामूली भी बातें नहीं। हम बेटरी द्वारा दिखला सकते हैं कि पृथ्वीतत्व की उत्पत्ति पानी से होती है। यदि साइन्स उन्नति न करती तो मज़हबी पुस्तक इसको बतला ही नहीं सकती थी। यह तो रहा मन्त्र भाग वेद, कुरान शरीफ़, इञ्जील का हाल।

अब चलिए पुराणों के पास यह भी कुछ उत्तर देते हैं कि "भेड़ों में भेड़ के मेल" कैसा किस्सा करते हैं। पुराणों के देखने से मालूम होता है कि पुराण तो इस पर कुछ लिखते हैं। इनका कथन यह है कि—

> नभसोऽनुसृतंस्पर्शं विकुर्वन्निर्ममेऽनिलम्।
> अनिलोऽपिविकुर्वाणो नभसोरुबलान्वितः॥
> ससर्जरूपतन्मात्रं ज्योतिर्लोकस्य लोचनम्॥
> अनिलेनान्वितं ज्योतिर्विकुर्वन्परवीक्षितम्॥
> आधत्ताम्भोरसमयं कालमायांश योगतः॥
> ज्योतिषाम्भोऽनुसंसृष्टं विकुर्वन्ब्रह्मवीक्षितम्।
> महींगन्धगुणा माधात्कालमायांश योगतः॥
>
> भागवत

अर्थ—विकार को प्राप्त हुआ आकाश स्पर्श दशा को प्राप्त होता है। वह स्पर्श जब अधिक विकार वाला होता है तब वायु बन जाता है। वह वायु भी आकाश से युक्त होकर शक्तिवान् होकर रूप की दशा को पहुंचाता है और फिर उसी से तेज उत्पन्न होता है। तदनन्तर वायु से युक्त और ईश्वर के अवलोकन किये हुए तेज ने रस गुण युक्त जल को उत्पन्न किया। ब्रह्म का अवलोकन किया हुआ तेज जलयुक्त होकर विकार को प्राप्त हुआ। तब उससे गन्ध, रूप, शब्द, स्पर्श, रस, गुणवती पृथ्वी पैदा हुई।

साइन्सवेत्ता पृथिवी, जल, वायु की उत्पत्ति तक ही पहुंचे किन्तु पुराण आगे के तत्वों की उत्पत्ति भी कह रहे हैं। इस आगे की उत्पत्ति तक भी साइन्स की तहकीकात किसी दिन अवश्य पहुंचेगी यानी पुराण उस ऊंचे दर्जे तक की तहकीकात पर भी पहुंच गये हैं जिस पर आधुनिक साइन्स का पहुंचना इस समय तक अधूरा ही है।

फिर यह भी कोई धर्म पुस्तक नहीं बतला सकती कि इन तत्वों की उत्पत्ति कितने दिन में हुई। इस विषय पर बाइबिल और कुरान का तो यह लेख है कि खुदा ने कुन कहा कहते ही बन गया। यहां तक लिखा है कि खुदा ने ६ दिन में समस्त ब्रह्माण्ड को रच दिया और सप्तम दिन में आराम किया। यह तो बाइबिल कुरानवालों का हाल है। अब हमारे मन्त्रभाग वाले वेदपाठी भाइयों के यहां चल कर पूँछिये, वहां कुछ भी पता

नहीं, न एक दिन का और न करोड़ दिन का। दयानन्दियों के वेद में तो कुछ है ही नहीं। किन्तु जिनके यहां कुछ पता चलता है कि ६ दिन में सब संसार बन गया उनकी परीक्षा करो उनका कहना ठीक है कि गलत? अच्छा अब इसका विचार देखो कि साइन्स इस विषय में क्या कहती है।

इसके ऊपर "सेक्रट डाक्टरन" नामी पुस्तक जो लन्दन में छपी है उसके द्वितीय भाग में प्रोफेसर लिचाफ साहब लिखते हैं कि जमीन को दो हजार डिगरी गर्मी से दो सौ डिगरी गर्मी तक पहुंचने के वास्ते किसी तरह से ३५ किरोड़ वर्ष से कम नहीं हो सकते। साइन्सवेत्ताओं ने अपनी अपनी किताबों में इस विषय पर अनेक लेख लिखे हैं जिनसे यह अच्छी तरह से सिद्ध हो जाता है कि किरोड़ों ही वर्ष में अग्नि का गोला ठंढा होकर जमीन बनी। जब साइन्स से यह सिद्ध है कि किरोड़ों वर्ष में जमीन बनी, फिर ६ दिन में सब ब्रह्माण्ड का रचा जाना और सातवें रोज खुदा का आराम करना कौन मान लेगा?

इसके ऊपर पुराण का क्या लेख है ज़रा इसको भी देख लें। श्रीमद्भागवत में लिखा है कि—

"वर्षपूग सहस्रान्ततदण्ड मुदकेशयन्"

मिला लीजिये। जिस बात की तहकीक़ात करके साइन्स आज बतलाने लगी है उस बात को पुराण पहले ही कह रहे हैं तब ही तो यह कहना है कि पुराणों का मानना छोड़ दोगे तो सर्ग का पता भी न चलेगा।

विसर्ग (विविध रचना) यह पता किसी भी धार्मिक पुस्तक से नहीं लगता कि मनुष्य की उत्पत्ति किसके बाद और किस प्रकार से हुई। किसी किसी धर्म पुस्तक में तो यह लिखा है कि खुदा ने एक मुट्ठी खाक से मनुष्य के पुतले को बना कर उसमें रूह फूंक दी बस आदम पैदा हो गया। और उस आदम की औलाद आदमी बने। यह लेख बाइबिल और कुरान का है। और इस विषय में वेदपाठी पार्टी के आचार्य स्वामी दयानन्द ने लिखा है कि युवा युवा पुरुष और युवा युवा स्त्री पैदा हो गई। अब इन अक्ल के हिमालयों से पूंछो कि वह युवान युवान पुरुष और स्त्री कहां से आ गये क्या ज़मीन में से निकल पड़े या आसमान से बरस गये ? अब क्यों नहीं बरसते कि नौकरों की तकलीफ़ तो मिटे। स्वामी दयानन्द के मत में केवल मनुष्य के ही जोड़े नहीं टपके किन्तु युवा युवा गाय और बैल, भैंस और भैंसा, आदि आदि सभी जोड़े ऊपर से टपके ; अच्छी बरसा हुई। मैं इनसे यह पूंछता हूं कि वह निराकार के जोड़े ऊपर किसके घर में और बिना मा बाप के कैसे बन गये। कुछ भी पता नहीं चलता साथ ही में मनुष्य और पशु पक्षियों की उत्पत्ति एक साथ हुई लिखी है।

साइन्स की तहक़ीक़ात कह रही है कि जब पृथ्वी बन गई तब प्रथम घास उगी। इसके बाद में बेल, झाड़ी, वृक्ष उगे। पश्चात् पक्षी पैदा हुये। इनके बाद पशु, और पशुओं के बाद मनुष्य पैदा हुये। जो सिलसिला मज़हबों की पुस्तकों में था वह

साइन्स की तहक़ीक़ात से साफ़ उड़ गया—साइन्स के सामने एक भी न ठहर सका। पूर्वोक्त धर्मों की पुस्तकों की दशा तो आप देख चुके अब ज़रा पुराणों का भी सिलसिला देखें—

पञ्चधावस्थितेसर्गे ध्यायतोऽप्रतिबोधवान् ।
बहिरन्तोऽप्रकाशश्च संवृतात्मानगात्मकः ॥१॥
मुख्यानगायतश्चोक्ता मुख्यसर्गस्ततः स्वयम् ।
तं दृष्ट्वासाधकं सर्गमथान्यच्च परंपुनः ॥ २ ॥
तस्याभिध्यायतः सर्गस्तिर्यक श्रोतोभ्यवर्तत ।
यस्मात्तिर्यक्प्रवृत्तःस्यात्तिर्यक्छ्रोतस्ततःस्मृतः३॥
पश्वादयोऽत्रविख्यातास्तमः प्रायाह्यवेदिनः ।
उत्पथ ग्राहिणश्चैवते ज्ञाने ज्ञानमानिनः ॥ ४ ॥
अहंकृता अहंमाना अष्टाविंशद्विधात्मकाः ।
अन्तः प्रकाशास्ते सर्वेआवृताश्च परस्परम् ॥५॥
तमप्यसाधकं मत्वाध्यायतोऽन्यस्ततोऽभवत् ।
ऊर्ध्वस्रोतस्तृतीयस्तुसात्विकोर्ध्वमवर्तत ॥ ६ ॥
ते सुख प्रीत बहुला बहिरन्तस्त्वनावृताः ।
प्रकाशा बहिरन्तश्चह्यूर्ध्वस्रोतोद्भवाः स्मृताः ॥ ७ ॥
तुष्टात्मनस्तुरीयस्तु देव सर्गस्तु संस्मृतः ।
यस्मिन्सर्गेभवप्रीतिर्निष्पन्नाब्रह्मणस्तथा ॥ ८ ॥
ततोऽन्यं सतदादध्यौ साधकं सर्ग मुत्तमम् ।
असाधकांस्तुताञ्ज्ञात्वामुख्यसर्गादि सम्भवान्९

तथाभिध्यायतस्तस्य सत्याभिध्यायिनस्ततः ।
प्रादुर्बभूव चाव्यक्तादर्वाक्स्रोतस्तुसाधकः ॥१०॥
यस्मादर्वाक् प्रवर्तन्ते ततोऽर्वाक स्रोत सस्तुते ।
तेचप्रकाशबहुलास्त मोद्रिक्ता रजोधिकाः ॥११॥
तस्मात्ते दुःख बहुला भूयो भूयश्च कारिणः ।
प्रकाशा वहिरन्तश्च मनुष्याः साधकाश्चते ॥१२॥

विष्णु पुराण प्र० अं० श्लोक ६-१७

इसका भावार्थ यह है कि ब्रह्मा ने सृष्टि को उत्पन्न करने के लिये विचार किया तब वृक्ष उत्पन्न हुये। इन वृक्षों में पांच प्रकार के झाड़ी वेलादि सब आगये। यह विद्याहीन थे अन्दर बाहर से सर्वथा अज्ञानी (बेसुध) ब्रह्मा की यह पहली उत्पन्न की हुई सृष्टि प्रथम सृष्टि के नाम से प्रसिद्ध हुई। ब्रह्मा ने इससे मनोरथ सिद्ध होते न देख और सृष्टि उत्पन्न की। यह सजीव सृष्टि हुई कीट, पतंग, पशु, पक्षी, सब इसके अन्तर्गत हैं। यह सृष्टि तम प्रधान थी और सत्य के ज्ञान से शून्य, कुपथगामी और मूर्खता को बुद्धिमत्ता समझने वाली थी। इनको सुख दुःख का बोध होने पर भी यह मूर्ख थे अर्थात् इनको सुख दुःख का बोध ज्ञान भी था तथापि जान बूझ कर दुःख में फँस जाते थे। इस लिये इनसे भी ब्रह्माजी को संतोष न हुआ। दूसरी सृष्टि का विचार किया अर्थात् सत्व प्रधान देवता उत्पन्न किये। यह लोग अन्दर बाहर के जानने वाले और सुख स्नेह

प्राप्त करने वाले सब स्थानों में प्रगट होते हुए इनसे ब्रह्मा प्रसन्न हुए इनके बाद मनुष्यों की रचना हुई। यह सत्व रज तम प्रधान दुख से मिले हुए और अन्दर के अच्छी प्रकार जानने वाले हुए। इन लोगों को कर्माधिकारी और ज्ञानाधिकारी देख ब्रह्मा बहुत ही प्रसन्न हुआ और समझा कि यही काम की वस्तु है। ध्यान से देखिये कि पुराण सृष्टि और साइन्स सृष्टि एक है या नहीं।

पुराणों की सृष्टि में मनुष्यों की उत्पत्ति आरम्भ से ही गर्भ से हुई। ईश्वर ने अपने शरीर के दो भाग किये। दक्षिण से मनु और बायें से सतरूपा हुई। इन्हीं की सन्तानसे जगत पूरित हुआ।

सृष्टि उत्पत्ति का समय—यह भी ठीक पता किसी धर्मग्रन्थ से नहीं लगता कि सृष्टि को बने आज कितने दिन हुए। इस विषय में ईसाई और मुसलमानों की धर्म पुस्तकों का तो यह कहना है कि संसार रचे आज पांच हज़ार वर्ष हुए और मंत्र-भाग को मानने वाले वेदपाठियों के यहां इसका कुछ पता ही नहीं चलता। दयानन्द के शिष्यों की तो कथा ही मत छेड़ो क्योंकि यह तो इस विषय में मौन धारण किये परमहंस बने बैठे हैं। पांच हज़ार वर्ष से सृष्टि बतलाने वालों की भी तहक़ीक़ात सच नहीं है।

आज साइन्स की तहकीक़ात से कोई बात छिपी नहीं रही। अब इस विषय में साइन्स की भी तहक़ीक़ात देख लीजिये—

प्रथम—"पापोलर इस्ट्रानोमी" किताब में प्रोफेसर "एस. न्यू-कोम्ब साहब" फरमाते हैं कि जब ज़मीन सर्द होकर नयातात

उगाने के योग्य हुई उस समय से अब तक १ करोड़ वर्ष से कम नहीं हुआ।

द्वितीय—किताब "वर्ल्ड लाइफ़" में प्रोफेसर "हकसिले साहिब बहादुर" जो संसार में अति प्रसिद्ध पुरुष गिने जाते हैं वह लिखते हैं कि ज़मीन में जब नवातात उगाने की शक्ति आई उस दिन से आज तक कम से कम एक अरब वर्ष गुज़र गये।

यह दो ही प्रमाण नहीं किन्तु हज़ारों प्रमाण साइन्स की तहक़ीक़ात में मिल रहे हैं कि जिन से यह साबित है कि ज़मीन बने न पांच हज़ार वर्ष हुए और न दस हज़ार किन्तु इसको बने किरोड़ों अरबों वर्ष हो गये।

साइन्स की तहकीक़ात यह भी कहती है कि मङ्गल पृथिवी से अधिक अवस्था वाला है, शुक्र का तारा कुछ कम युवा, बृहस्पति और शनि अभी बच्चे हैं, उनके आस पास भाफ के घेरे बहुत बड़े बड़े हैं जिनके समुद्र बनेंगे, हमारा सूर्य्य अच्छा युवान है। हमारा चांद बूढ़ा होगया अनुमान दो सौ वर्ष में यह चांद नष्ट हो जावेगा फिर आप लोगों को इसके दर्शन न होंगे। शायद जब तक परमात्मा आप के लिए कोई दूसरा चांद पैदा करदे या फिर अँधेरे ही में रहना पड़े। इस स्थान में पृथ्वी की भी तहक़ीक़ात लिखी है। पृथ्वी के लिए लिखा है कि हमारी पृथ्वी युवान अवस्था में है। यह साइन्स की तहक़ीक़ात है। अब पुराणों का कथन भी सुनलें—

इस विषय में पुराणों का वही कथन है जो साइन्स का।

पुराण भी अरबों वरसों से सृष्टि की उत्पत्ति कह कर पृथ्वी को युवान दशा में वतला रहे हैं। पुराण कहते हैं कि जव से सृष्टि वनती है उस दिन से प्रलय तक इस अवधि को कल्प कहते हैं और एक कल्प में चतुर्दश मनु होते हैं। अव जो सृष्टि वर्तमान है। इसका नाम वाराहकल्प है। इस वाराहकल्प में सातवां वैवस्वत मनु भोग रहा है, और अव आगे सात ही वाकी हैं। कहिए पृथ्वी युवान ही अवस्था में है या कुछ और दशा में? अच्छा पृथ्वी कव वनी इसका हिसाव लगालें। एक मनु इकहत्तर चतुर्युगी का होता है अर्थात् एक मनु में इकहत्तर वार चारों युग भोग जाते हैं। चतुर्युग अर्थात् सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ४३२०००० वर्ष के होते हैं और कल्प में स्वायंभू, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष ये ६ मनु वीत चुके, इनके वर्षों में २७ युग के वर्ष जोड़ कर अट्ठाईसवें में युग कलियुग के ५०१४ वर्ष और जोड़ दो क्योंकि वैवस्वत मनु में यह अट्ठाईसवां युग है। इस जोड़ से सृष्टि का आरम्भ काल निकल आवेगा और वह अरबों वरसों की संख्या में होगा।

कहिये पुराणों के सृष्टिकाल में और साइन्स की तहकीकात में कुछ फर्क है? कुछ नहीं। जैसे जैसे साइन्स की तहकीकात पुख्ता होगी वैसे ही वैसे पुराणों की पुष्टि होगी।

जिस प्रकार दूसरे धर्म पुस्तकों में विसर्ग का पता नहीं लगता, उसी प्रकार प्रलय (कयामत) का ठीक पता कहीं पर नहीं लिखा। दयानन्द समाज तो प्रश्न ही करती है उत्तर

पुराणसिद्धिः

नहीं देती और दूसरे मजहबों की भी अजब ही हालत है।

कोई कोई तो इसी शताब्दि में कयामत बतलाते हैं किन्तु पुराण और साइन्स एक ही रास्ते पर हैं जो पृथिवी को युवान बतला रहे हैं। इसी से प्रलय समझ लीजिये।

वंश—यदि पुराणों को छोड़ दोगे तो वंशों के वर्णन का भी पता नहीं लगेगा। दो तीन पीढ़ी के बुजुर्गों को भले ही कोई कण्ठ करले किन्तु इससे आगे का कुछ भी पता नहीं चलेगा कि दलीप के रघु हुए या रघु के दलीप? और यह भी पता नहीं चलेगा कि हुए या नहीं हुए।

स्वामी दयानन्द जो पुराण के पूर्ण विरोधी थे उनको भी पुराणों की शरण में आना पड़ा पुराणों को सत्य मान कर उन पर से राज वंशावली बना, अपने सत्यार्थ प्रकाश में लिखी। यही तो पुराणों में अद्भुतता है कि इनके शत्रु भी इनके चरणों में शीश रखते हैं।

मन्वन्तर—यदि पुराणों को न माना जावेगा तो मन्वन्तरों का भी कुछ पता न चलेगा। इसके विना कौन पुरुष कब हुआ इसकी कुछ खबर न हो सकेगी।

वंशचरित्र—यदि पुराण नहीं मानोगे तो वंशों के चरित्रों का भी पता नहीं लगेगा। पुराणों के विना यह कभी भी पता न चलेगा कि राजा अम्बरीष धार्मिक था कि अधार्मिक।

ऐसे ऐसे अनेक विषय हैं कि जिनका पता पुराण ही बतला सकते हैं। इस ज्ञान के लिए दयानन्दी तो क्या पूरे नास्तिक क्यों न हों उनको भी पुराण मानने ही पड़ेंगे।

विज्ञानाध्यायः

आज एक हवा ऐसी चल गई कि "भारतमित्र" "वेङ्कटेश्वर" "अभ्युदय" "बंगवासी" "लीडर" "पायनियर" आदि समाचारपत्रों पर विश्वास है किन्तु पुराणों पर विश्वास नहीं। यह क्यों, इसका कारण क्या? उत्तर इसका यही है कि यह लोग पुराणों को तो देखते ही नहीं किन्तु दूर दूर से उनकी बुराई सुनते हैं। पुराणों की जो जो बातें हमने पूर्व में दिखलाई हैं या यों कहिए कि पुराणों के बिना जो हानियें हमने बतलाई हैं यदि उनको सुनें या पढ़ें और इसके अनन्तर किंचित्मात्र भी विचार अपने मन में करें तो हमको पूर्ण विश्वास है कि वे पुरुष पुराणों के लिए कदापि शिर न हिलावेंगे। पुराण ऐसे पुस्तक ही नहीं कि जिनके लिए कोई शिर हिलावे या चींचपट करे। भारत की गई इज्जत को यदि कोई बचा रहा है तो वे पुराण ही हैं। यदि पुराणों को छोड़ दोगे तो पूर्वकाल में भारतवर्ष ऐसा था वैसा था इस विषय में जीभ बन्द हो जावेगी और अपने बुजुर्गों की कीर्ति सुनाकर जो सोते हुए भारत को उठाना चाहते हैं उनको केवल "मेज़िनी" "गेरीबाल्डी" "ब्राडला" आदि यूरुपवासियों की शरण में जाना होगा और उन्हीं के चाल-चलन, आहार, व्यवहारको ठीक और सत्य समझ कर हिन्दू जातिको ईसाई बनाकर छोड़ना होगा। हिन्दूजातिको बचाने वाले पुराण ही हैं।

पाठकवृन्द! पुराणों की सत्यता, तथा वैदिकता, और ज्ञान दातृत्व आप देख चुके। अब आगे पुराण मृषा कलङ्क दूर किए जावेंगे।

इतिश्रीकालूरामरचितपुराणसिद्धौयां विज्ञानाध्यायश्चतुर्थः।

॥ श्रीः ॥

सूचीपत्र

व्याकरण की उत्तम पुस्तकें

शब्दार्थरूपमीमांसा।

यह पुस्तक शास्त्रीजी ने बना कर मुद्रित कराई है इसमें राम शब्द से लेकर "लघुसिद्धान्त कौमुदी" के षड्लिंग में जितने शब्द "वरदराज" ने दिये हैं उन सब की "व्युत्पत्ति" तथा जिनमें समास है उनका "समास" शब्द का अर्थ और समस्त रूप लिखे हैं। "लघु कौमुदी" पढ़ने वाले विद्यार्थियों को इस पुस्तक से बहुत सहायता मिलती है इस बात को विद्यार्थी और अध्यापक दोनों ही समझते हैं। इस पुस्तक का मूल्य ।) रक्खा था किन्तु विद्यार्थियों की दशा देख कर =) कर दिया है।

अव्ययार्थमीमांसा।

इस पुस्तक में अव्ययों का अर्थ संस्कृत में लिखा गयाहै जिस समय विद्यार्थी षड्लिंग पढ़कर "अव्यय" पढ़ना आरम्भ करता है यह पुस्तक उस समय सहायता देती है पहला मुल्य =) इस समय का -)

धात्वर्थरूपमीमांसा भाग १.

इस पुस्तक में "लघुसिद्धान्तकौमुदी" के भ्वादिगण" में जितने धातु पढ़े हैं उन सबके "समस्त रूप" और अर्थ लिखे हैं पहला मूल्य ।) अब =)

मूर्ति पूजा

इस पुस्तक में ६ अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में यह दिखलाया है कि अफ्रिका, अमेरिका, यूरोप, एशिया, आदि आदि भूमंडल के समस्त देशों में मूर्ति पूजन पूर्व में होता रहा था और अब भी होता है जिस देश में जिस मूर्ति का पूजन होता है उसका स्वरूप वा नाम भी वतलाया है। यह भी लिखा है कि स्वामी दयानन्द ने जिन वेद मन्त्रों से मूर्ति पूजा का खण्डन किया है उनका यह अर्थ त्रिकाल में भी नहीं हो सकता खंडनात्मक अर्थ फर्ज़ी और मिथ्या है। "नतस्य प्रतिमा अस्ति" इस निषेधात्मक मन्त्र से ही यज्ञ में मूर्ति स्थापित होती है। मूर्ति पूजन समस्त युगों में होता रहा है। द्वितीय अध्याय में वेद से ईश्वर के अंगों का वर्णन मूर्ति पूजन करनें की आज्ञा और उसका फल। मनुस्मृति अष्टाध्यायी महाभाष्य से भी मूर्ति पूजन की सिद्धि दिखलाई है। तृतीयाध्याय में स्वामी दयानन्द लिखित मूर्ति पूजन दिखलाया है। संध्या में ईश्वर की मानसिक परिक्रमा, आर्याभिविनय की रीति से ईश्वर को सोम खिलाना और दवाई पिलाना, पञ्च महायज्ञ विधि के अनुसार वृक्षों और भद्रकाली को भोग लगाना, "घृतेन सीतामधुना" इस मन्त्र से खेत के पहटा (पटेला) का पूजन करना संस्कार विधि के अनुसार ओखली मूसल को नित्य भोग धरना, संस्कारविधि के लेख से कुश और नाई के छुरे का पूजन करना दिखलाया गया है अर्थात् यह सिद्ध

किया है कि समाजी लोग ईश्वर की प्रतिमा का तो निषेध करते हैं किन्तु स्वामी दयानन्द के लेखानुसार ऊपर लिखी मूर्तियों को पूजते हैं। चतुर्थ अध्याय में यज्ञ में जिन मूर्तियों का पूजन होता है वेद के मन्त्रों के द्वारा विस्तार से दिखलाया है। पञ्चम अध्याय में स्वामी दयानन्द और पं० तुलसीराम तथा अन्य अन्य समाजियों की तर्कों के मुंहतोड़ उत्तर दिये गये हैं जिनको सुन कर आर्यसमाजियों के मुंह बन्द होजाते हैं। षष्ठाध्याय में आज कल के होने वाले मूर्ति पूजन के व्याख्यान लिखे हैं। "मासिक पत्रिका सरस्वती" प्रयाग, "ब्राह्मण सर्वस्व" मासिक पत्र इटावा, "सनातनधर्म पताका" मुरादाबाद, "ब्रह्मचारी" मासिक पत्र हरिद्वार आदि ने इसकी बहुत प्रशंसा छापी है। यह अद्वितीय ग्रन्थ है इस पुस्तक के निर्माता पं० कालूराम शास्त्री हैं और मूल्य ॥।) है।

अवतार

इस पुस्तक में ८ अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में "कुरान शरीफ" और "बाइबिल" से यह सिद्ध किया है कि इन पुस्तकों में ईश्वर शरीरी (रूपवाला) है। १२ प्रमाण बाइबिल और ९ प्रमाण कुरान शरीफ के दिये गये हैं। द्वितीयाध्याय में यह दिखलाया है कि वेद में ईश्वरावतार का निषेध नहीं और स्वामी दयानन्द ने जो निषेध बतलाया इसमें स्वामीजी ने गलती खाई है। तृतीयाध्याय में यह दिखलाया है कि स्वामी दयानन्दजी ने अपने लेख में १३ जगह ईश्वर को साकार शरीरधारी लिखा है अर्थात्

स्वामी दयानन्द जो आर्यसमाज के प्रवर्तक थे वे भी ईश्वर को साकार मानते हैं। चतुर्थाध्याय में वेद से अवतार सिद्धि बतला कर "ब्रह्मा" "वाराह" "वामन" "रुद्र" "राम" कृष्ण" "मत्स्य" "यक्ष" ये आठ अवतार वेद से दिखलाये हैं । पंचमाध्याय में पुराणों से अवतार सिद्धि की गई है। षष्ठाध्याय में अजन्मा ईश्वर का जन्म कैसे। ईश्वर के शरीर धारण की क्या ज़रूरत। निराकार ईश्वर साकार कैसे होगा। बिना कर्म शरीर कैसा। जब ईश्वर एक रस है तब अवतार कैसा। जब ईश्वर राम हो कर अयोध्या में आ गये फिर सर्वव्यापक कैसे। इन शंकाओं के वे उत्तर दिये गये हैं कि शंका करने वाले सुन कर आगे को शंका करना भूल जाते हैं। सप्तमाध्याय में ईश्वर सिद्धि तर्क फिलास्फी से की गई है जो पूर्ण तोषदायक है जिसको सुन कर नास्तिकों की चाल बन्द हो जाती है। अष्टमाध्याय में ब्रह्मविद्या से ईश्वर का स्वरूप बतलाया गया है। इस पुस्तक के छपने पर आर्यसमाज में बड़ी खलबली पड़ी थी पं० तुलसीराम को इसके खण्डन के लिए लिखा गया उन्होंने बहाने बना कर टाल दिया इसके लिए 'ब्राह्मण सर्वस्व' भाग ११ अंक ७ देखिए । पं० तुलसीराम तो क्या कोई भी समाजी भाई इसका उत्तर नहीं दे सकता बल्कि जिस पुरुष ने एक बार इस पुस्तक को देखा है उसके सन्मुख आर्यसमाजी भाई हार हार कर चले जाते हैं मूल्य ।||) है ।

श्राद्ध

इस पुस्तक में ४ अध्याय हैं। प्रथमाध्याय में (क) स्वामी दयानन्द कृत श्राद्ध का लक्षण (तारीफ) डिफिनेशन की अशुद्धता दिखलाई गई है कि इसमें अति व्याप्ति दोष हैं और इस लक्षण से विवाह द्विरागमन गृह निर्माण सभा का उत्सव आदि आदि समस्त काम श्राद्ध होजाते हैं (ख) वेद में श्राद्ध मृतक पितरों का ही लिखा है इस विषय को वेद मन्त्र देकर विस्तार से लिखा है। द्वितीयाध्याय में यह दिखाया है कि जीवित पितरों का जो श्राद्ध है यह गढ़न्त है इसकी पुष्टि में वेदादि का कोई भी प्रमाण आज तक न मिला है और न आगे को मिल सकता है। तृतीयाध्याय में इस बात का सबूत है कि स्वामी दयानन्दजी मृतक पितरों का ही श्राद्ध तर्पण मानते थे। सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि में अब भी मृतकों का ही श्राद्ध तर्पण लिखा है। चतुर्थाध्याय में उन शंकाओं का मुंहतोड़ उत्तर दिया गया है कि जो शंका आर्यसमाजी सनातनधर्मियों से किया करते हैं (१) अन्य के कर्म का फल अन्य को कैसे मिल सकता है, श्राद्ध करें पुत्र और उसका फल भोगे पिता (२) ब्राह्मणों का पेट क्या लेटर बाक्स है जो इधर डाला और उधर पितरों को मिल गया (३) श्राद्ध का भोजन ब्राह्मणों को ही क्यों खिलाया जावे (४) दश बीस ब्राह्मण जिमा कर क्या पितरोंका पेट फाड़ना है (५) हमारे पिता तो गधा हो गये अब हम पूरी कचौरी क्यों खिलावें (६)

पितरों को भोजन मिलने की कोई रसीद है। इत्यादि। पश्चात् यह दिखलाया है कि श्राद्ध सदा से होता है और मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु रामचन्द्रजी ने अपने पिता दशरथ का श्राद्ध वन में करके यह मर्यादा दिखलाई है कि श्राद्ध अवश्य करना चाहिये और वह मृतक पितरों का ही होता है। इस पुस्तक के रचयिता पं० कालूरामजी शास्त्री हैं और इसका मूल्य ।) है।

पुराणकलंकाभासमार्जन

इस पुस्तक में प्रथम आर्यसमाजियों के उन प्रश्नों का उत्तर दिया गया है कि जिनमें वे ब्रह्मा विष्णु महेश इनकी निन्दा बतलाते हैं शैव विष्णु को उच्च कोटि में और वैष्णव शिव को उच्च कोटि में मानते हैं (२) भस्म लगाने से नरक को जाना और ऊर्ध्व पुंड के लगाने से पाप का भागी होना है इत्यादि जो आज कल कलंक लगाये जाते हैं उनका तोषदायक उत्तर दिया है (३) वैष्णव, शैव, शाक्त, गाणपत्य, सौर, इनकी एकता दिखलाई गई है (४) ब्रह्मा, विष्णु, महेश इनके ऊपर जितने कलंक लगाये जाते है वे कलंक नहीं हैं किन्तु शास्त्रानभिज्ञ पुरुष उनको कलंक कहते हैं यह दिखलाया गया है (५) यह दिखलाया है कि आज कल जो शिव के लिंग पूजन की मसखरी करते हैं वे वेद और पुराण दोनों से अनभिज्ञ हैं। इस पुस्तक के रचयिता पं० कालूराम जी शास्त्री हैं मूल्य ।) आना है।

नियोग मर्दन

स्वामी दयानन्दजी ने सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रन्थ लिखा है इसमें स्त्रियों के लिए यह धर्म बतलाया है कि एक स्त्री चाहे उसका पति मर गया हो या जीवित हो ११ पति कर सकती है इस व्यभिचार को संसार से उड़ाने के लिए यह पुस्तक लिखा गया है पुस्तक हाथ में लेते ही हास्यरस का संचार होता है और अन्त तक हंसी बंद नहीं होती इस से यह पता लग जाता है कि स्वामी दयानंद संसार में वैदिक धर्म फैलाना नहीं चाहते किन्तु उसको उड़ाना चाहते हैं। इस पुस्तक के रचयिता पं० कालूराम जी शास्त्री हैं मूल्य ।) आना है।

विधवा विवाह मर्दन

आजकल आर्यसमाजी तथा देश के नेता कहलाने वाले जो देश के परम शत्रु हैं उनको विधवा विवाह के भूत ने बेतरह सता रक्खा है और चारों तरफ यह आवाज आती है कि जब तक विधवा विवाह न करोगे देश उन्नति पर न पहुंचेगा ये लोग विधवा विवाह में जितने प्रमाण और जितनी युक्ति देते हैं उन सब का खण्डन करके यह दिखलाया गया है कि वेद शास्त्र तथा तर्क किसी से भी विधवा विवाह सिद्ध नहीं है। विधवा विवाह वाले खुद मान चुके हैं कि इस पुस्तक का जवाब हम कुछ नहीं दे सकते। इसके रचयिता पं० कालूरामजी शास्त्री हैं और मूल्य ।) आना है।

वर्ण व्यवस्था

हिन्दुओं में सर्वदा से वर्ण व्यवस्था जन्म से चली आरही है किन्तु स्वामी दयानंदजी ने वैदिक धर्म का खण्डन करते हुए वर्णव्यवस्था भी गुण, कर्म, स्वभाव से मानली है स्वामी दयानंद के शिष्यों ने और भी तरक्की कर डाली है इन्हों ने गुण कर्म स्वभाव को भी उड़ा दिया अब वर्ण व्यवस्था आर्यसमाजियों ने अपने आधीन रखली है। लाला लाजपतराय ने नैनीताल जिले के श्वपचों को जनेऊ पहना कर वैश्य बना दिया और वल्लभगढ़ के चमारों को और और आर्यसमाजियों ने जनेऊ पहना कर क्षत्री बना दिया। आजकल के आर्यसमाजी सभी के हाथ का भोजन कर हिन्दू जाति का नाश करते हुए उसको वैदिक धर्म बतलाते हैं। इस पुस्तक में यह दिखलाया गया है कि यह वेद धर्म नहीं है किन्तु वेद शास्त्र सभी पुस्तक वर्ण व्यवस्था जन्म से मानते हैं। इसके रचयिता श्री पं० कालूरामजी शास्त्री हैं मूल्य ।) आना है।

धर्मप्रकाश

यह पुस्तक वह पुस्तक है कि सनातनधर्मी संसार जिसके छपने की बहुत रोज से उत्सुकता रखता था, यह वह पुस्तक है कि "सरस्वती" मासिक पत्रिका प्रयाग, तथा ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम हरिद्वार का मुख्यपत्र "ब्रह्मचारी" तथा "सनातनधर्म पताका" आदि आदि पत्रों ने जिसकी प्रशंसा लिखी है। इतना

ही नहीं विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र तथा वेद व्याख्याता पं० भीमसेन जी प्रोफेसर बंगाल युनिवर्सिटी आदि आदि विद्वानों ने जिसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की है इन्होंने यहां तक लिखा है कि जिसके यहां यह एक पुस्तक है उसको सनातन धर्म का गौरव और आर्यसमाज की पोल जानने के लिये द्वितीय ग्रन्थ की आवश्यकता नहीं है। यह पुस्तक मासिक रूप में निकलता है जिसके कुछ समुल्लास तैयार हो गये हैं। बड़े बड़े ९६० पृष्ठों का वार्षिक मूल्य ३) है। पृथक पृथक समुल्लासों का मूल्य नीचे लिखा जाता है :—

प्रथम समुल्लास ।≡), द्वितीय समुल्लास ।≡), तृतीय समुल्लास १।≡), चतुर्थ समुल्लास २॥), पंचम और षष्ट समुल्लास ≡) ।

प्रथमावृत्ति असली सन् १८७५

का

सत्यार्थ प्रकाश

सन् १८७५ का छपा सत्यार्थप्रकाश जो असली था जिसको आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्दजी ने निर्माण किया था जो खोजने पर भी नहीं मिलता था उसको शास्त्रीजी ने मुद्रित कराया है जितने पृष्ठ प्रथमावृत्ति में पहले छपे थे उतने ही इसमें हैं एक पृष्ठ का लेख किसी द्वितीय पृष्ठ में नहीं पहुंचाया गया अर्थात् जितना लेख जिस पृष्ठ में था उतनाही इसके पृष्ठ में है एक पंकि

का लेख दूसरी पंक्ति में नहीं गया। यह सत्यार्थ प्रकाश सर्वथा सन् १८७५ की टू कापी है अशुद्ध के स्थान में अशुद्ध और शुद्ध के स्थान में शुद्ध छपा है। इसके विचार नामक लेख में यह अच्छे प्रकार से सिद्ध किया गया है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती का बनाया यही सत्यार्थ प्रकाश है और द्वितीयावृत्ति स्वामी दयानन्द का बनाया नहीं किन्तु उनके मरने के बाद समाजियों ने इसकी काट छांट करके तैयार कर लिया है।

शास्त्री जी ने जो प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश सन् १८७५ का छपवाया है उसमें उनको यह संदेह हुआ कि जहां जहां पर आर्यसमाजियों के विरुद्ध लेख होगा वहां वहां पर आर्यसमाजी यह कह देंगे कि यह पाठ पं० कालूराम शास्त्री ने मिलादिया इतना कहकर निकल जावेंगे 'कालूराम ने पाठ मिला दिया' इतने अक्षर आर्यसमाजी न कह सकें इसके लिये उन्होंने यह उपाय किया कि सन् १८७५ की छपी आवृत्ति और अपनी छपवाई आवृत्ति को लेकर विद्वानों के सन्मुख रक्खा और उनसे प्रार्थना की कि आप दोनों को मिला कर यह लिखें कि इसमें पं० कालूराम ने कमी वेशी की है या जैसा का तैसा है। इन विद्वानों ने जो लिखा है वह सत्यार्थ प्रकाश के आरम्भ में छाप दिया है इन समस्त विद्वानों ने यही लिखा है कि पं० कालूराम ने अपनी तरफ से एक भी शब्द की न्यूनाधिकता नहीं की। सज्जनों के नाम ये है (१) सूफी लक्ष्मणप्रसादजी एडीटर मस्तानायोगी, (२) भवानीशंकर ज्योषी असिस्टन्ट

एडीटर सनातनधर्म प्रचारक, (३) पं० रलियाराम महोपदेशक अमृतसर, (४) पं० श्रवणलालजी महोपदेशक झालरापाटन, (५) विद्यारत्न पं० गोकुलचन्द्रजी मेरठ, (६) विद्यारत्न पं० कन्हैया लालजी शाहजहांपुर, (७) बा० अवधबिहारीलालजी बी० ए० एल० एल० बी० जनरल मन्त्री सनातन धर्म संयुक्त प्रान्त मण्डल, (८) बा० मुरारीलालजी मंत्री सनातनधर्म पंजाब मण्डल, (९) पं० गिरधराचार्यजी चतुर्वेदी प्रोफेसर ऋषिकुल हरिद्वार, (१०) पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र मुरादाबाद, (११) पं० प्यारेलालजी शास्त्री प्रोफेसर कमिश्नरी कालेज मेरठ, (१२) आर्यसमाज के मुख्य पण्डित पं० तुलसीराम स्वामी मेरठ के लघु भ्राता पं० छुट्टनलालजी स्वामी। मूल्य ३) डाक व्यय ।) ।

नीचे लिखे ट्रेक्ट भी मौजूद हैं—

दयानन्द की विद्वत्ता)॥ नमस्ते मीमांसा)॥ शुद्धि विवेचन ~) आर्यसमाज की गति)॥ दयानन्द की बुद्धि)। धर्म संताप)। नवीनमत समीक्षा)। संध्या से आयु की वृद्धि)॥ निराकार भ्रम मर्दन)॥ निराकार में ईश्वराभाव)॥ नई शिक्षा का विपरीत फल)॥ भजन मणि माला ~)॥ दयानन्द हृदय)॥ दयानन्द मत सूची)॥ दयानन्द मत दर्पण)॥ दयानन्द का कच्चा चिट्ठा)॥ मुरारी की बलिहारी)॥

उपरोक्त पुस्तकों के अलावा पं० भीमसेनजी के यहां की समस्त पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं।

श्राद्ध ॥) दयानन्द मत विद्रावण ।) आर्य मत निराकरण प्रश्नावली ।) पंच कन्या चरित्र ‑) अश्वमेधिक मन्त्र मीमांसा =) विधवा विवाह मीमांसा ।=) नरमेध)॥ उपनिषद् उपदेश दोनों भाग हमारे यहां मिलते हैं।

पता—

कामताप्रसाद दीक्षित,

अमरौधा (कानपुर)

हमारे एजन्टों का पता—

(१) हनुमानदास ब्रजवल्लभ का पुस्तकालय, पता—चौक बाजार, कानपुर।

(२) पं० नन्दकिशोर बुकसेलर, पता—पीलीकोठी, कानपुर।

(३) पं० अनोखेलालजी भजनोपदेशक, मु० तिलहर जिला शाहजहांपुर।

(४) पं० गजानन्दरावजी भजनोपदेशक, मु० मैनपुरी।

(५) बा० मुरारीलालजी मन्त्री सनातनधर्म मंडल, मु० फिरोज़पुर (पंजाब)।

(६) सनातनधर्म मंडल बुक डिपो, मु० मेरठ सिटी।

(७) कविजन सुखराम नहरराम, पता—हवाड़िया चकला मु० सूरत।

(८) महा ज्योति कार्यालय, पता—टंकसालसामे, मु० अहमदाबाद (गुजरात)।

(९) मैनेजर ब्रह्म प्रेस, मु० इटावा।

(१०) पं० तीर्थरामजी जोषी बुकसेलर, मु० अमृतसर (पंजाब)।

इनके अलावा इस वर्ष और और स्थान में भी एजन्ट नियत किये जावेंगे जिससे पुस्तक खरीदनेवाले ग्राहकों को आराम मिले।

भवदीय—

कामताप्रसाद दीक्षित,

अमरौधा (कानपुर)